ओ३म्

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नतो अरावणः॥

आर्य संकल्प

(बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष-38 अक्टूबर/नवम्बर संयुक्तांक अंक-9

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
कार्यालय : श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 (बिहार)

आर्य संकल्प

संरक्षक
भाई विरेन्द्र, सभा प्रधान

प्रधान सम्पादक
रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मोबाईल-9334184136

सम्पादक
संजय सत्यार्थी
मोबाईल-9006166168

सह सम्पादक
अरविन्द शास्त्री
मनोज शास्त्री
प्रेम कुमार शास्त्री

सम्पादक मंडल
ज्ञानेश्वर शर्मा
सत्य प्रिय शास्त्री

कोषाध्यक्ष
जयदेव कुमार आर्य

स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नयाटोला, पटना-800 004

E-mail :
mantribraps@gmail.com

सदस्यता शुल्क
एक प्रति : 15/-
वार्षिक : 120/-

वार्षिक निर्वाचन एवं साधारण अधिवेशन में मंचासीन अधिकारी सभा को सम्बोधित करते हुए

आर्य संकल्प

-: सूची :-

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	वेद मंत्र	1
2.	सम्पादकीय	2
3.	वेद प्रार्थना	3
4.	बुद्धि प्राप्ति	5
5.	वेदश्चक्षुः सनातनम्	10
6.	यज्ञ में वेद मंत्रों से...	22
7.	नीति नवनीति	28
8.	सत्यार्थ प्रकाश का संदेश	32
9.	कविता	36
10.	कल्याणकारी बनावें	37
11.	समाचार	38

इस पत्रिका में दिये गये लेख लेखकों के अपने विचार हैं, इससे सम्पादक का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

अक्टुबर-नवम्बर संयुक्तांक

डर मत, पराक्रम कर

मा भेर्मा संविक्था ऊर्जं धत्सव धिषणे वीड्वीसती
वीडयेथामूर्जं दधाथाम्। पाप्मा हतो न सोमः ॥

(यजु. 6 । 35)

शब्दार्थ- (मा भेः) हे मानव! डर मत (मा संविक्था) कम्पायमान मत हो, मत घबड़ा। (ऊर्जम् धत्स्व) बल, साहस, पराक्रम धारण कर। (धिषणे) वाणी और विद्या का आश्रय लेकर और इन दोनों के आश्रय से (वीड्वीसती) बलवान् होकर (वीडयेथाम्) पुरुषार्थ करो (ऊर्जम् दधाथाम्) पराक्रम करो, जौहर दिखाओ! (पाप्माः) पाप करनेवाला शत्रु, पापी (हतः) मारा जाए, नष्ट हो जाए (न सोमः) सौम्यगुणयुक्त, सदाचारी पुरुषों का नाश न हो।

भावार्थ- यदि संसार में पाप, अनाचार, भ्रष्टाचार, पाखण्ड, दम्भ, अधर्म बढ़ गया है, यदि दस्युओं, अनार्यों, अधर्मात्माओं और पाखण्डियों ने संसार के लोगों को आतंकित कर रक्खा है तो डरो मत, भयभीत मत होओ, घबराओ मत। उठो, खड़े हो जाओ और पराक्रम करो।

विद्याबल से अपने को विभूषित करो, वाणी का बल सम्पादन करो। विद्या और वाणी का आश्रय लेकर- इन दोनों से बलवान् बनकर दानवता को दग्ध करने के लिए, मानवता का त्राण करने के लिए संसार में कूद पड़ो, जौहर कर दो।

ऐसा पराक्रम करो कि जितने भी पापी, अत्याचारी, अनाचारी और पाखण्डी हैं उनमें से एक भी जीवित न रह पाए। पापियों को नष्ट-भ्रष्ट कर दो।

जो सौम्य हैं, पुण्यात्मा हैं, सदाचारी और श्रेष्ठ पुरुष हैं उनकी रक्षा करो।

■

सम्पादकीय

संतति और संस्कृति की रक्षा के लिए आर्य समाज को सुरक्षित रखें

जब कोई पौधा लगाता है तो पौधा लगाने वाले फल की इच्छा अवश्य करता है। इस निमित्त पौधा में जल डालता है, खर-पतवार हटाता है, खाद डालता है ताकि पौधे की हरियाली बनी रहे और वह निर्विघ्न बढ़ता रहे और अपने उत्कर्ष पर पहुँचे। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने मुम्बई में 1857 ई० में आर्य समाज की स्थापना किये, आर्य समाज रूपी पौधा अपने कर-कमलों से लगाये। इसे सींचने के लिए नियम और उपनियम भी बनाये जिससे पौधा पुष्पित पल्लवित होकर अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके।

आर्य समाज रूपी पौधा अब ऋषि के कर कमलों से स्थापित हो गया तब इसे उद्‌बुद्ध करने के लिए अनेक महामनः सपूतों ने अपने जीवन और जवानी की आहूति दी। इस बगिया को हरा-भरा और सुसज्जित रखा। आर्य समाज एक ऐसा आन्दोलन बन गया जहाँ से क्रांति की चिंगारी लपलपाती अज्ञान, अंधविश्वास, पाखण्ड आदि को भष्मीभूत कर रही थी। शास्त्रार्थों के द्वारा लोग सत्य को समझने लगे थे। मानो धर्म की बगिया में हरियाली ही हरियाली का दृष्य उपस्थित हुआ हो। सम्पूर्ण विश्व में महर्षि दयानन्द के विचार हिलकोरें लेने लगी। विदेशी भी कहने लगे "आयेंगे खत अरब से जिसमें लिखा यह होगा, हिन्दुस्तान का ब्रह्मचारी हलचल मचा रहा है।"

जिसने महर्षि दयानन्द को समझा वो महर्षि का होकर रह गया। उसने संसार के सभी सुख-सुविधाओं का परित्याग कर अनेक विघ्न-बाधाओं को पीछे छोड़कर केवल और केवल वैदिक धर्म के प्रचार में अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया, इस आशा और विश्वास के साथ कि हमारी आनेवाली संतति और संस्कृति सुरक्षित रह सके। वेदों के ज्ञान से संसार सरावोर हो जाए और महर्षि का स्वप्न "कण्वन्तो विश्वमार्यम" साकार हो जाय।

परन्तु दुर्भाग्य से हमारे आचार्य ने जो स्वर्णिम पथ हमारे लिये तैयार किया, उस पथ को छोड़कर हम इधर-उधर चलने लगे। परिणामतः जीवन से लेकर समाज तक की उलझनों में उलझकर अपने आप को हम समाप्त कर रहे हैं। थोड़ी-थोड़ी सी स्वार्थ के कारण ऋषि व्यवस्था को तिलांजलि देकर पद-प्रतिष्ठा और वर्चस्व के लिए मानों आर्य समाज की हत्या करते जा रहे हैं साथ ही सोच भी रहे हैं कि आर्य समाज के सबसे बड़े हिमायती हम ही हैं। ऋषि ने आर्य समाज की रक्षा और सुरक्षा के लिए एक अद्‌भुत सूत्र दिया जो इस प्रकार है- "सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।"

आज हाल ये है कि सत्य को बोलने की क्षमता किसी में नहीं है केवल यह देखना है कि कौन हमारे पक्ष का है, उसका पक्ष लेने के लिये अगर सत्य का हजार बार गला घोटना पड़े तो, वह घोटेगा, सत्य का गला। क्योंकि उन्हें अपना उल्लू सीधा करना है। दयानन्द के नाम पर तो केवल दुकानदारी चमकानी है। कहाँ गया ऋषि भक्ति? कहाँ गया ऋषि विचार, अरे ऋषि ने तो सत्य के लिए उंगलियों को मोमबत्ती बनाना स्वीकार किया, अनेकों बार विष के प्याले पिये परन्तु उनके शिष्य क्या कर रहे हैं?

आर्यों, सोचने-समझने की घड़ी है। विचार करो अगर आर्य समाज नहीं है तो तुम्हारा वजूद क्या है, तुम्हारी औकात क्या है? चींटी भी अपनी राह स्वयं बनाती है, तुम्हारा तो स्वर्णिम पथ तैयार है बस! चलने के लिए तैयार हो जाओ। सब ठीक हो जायेगा।

होशियारी का दामन न पकड़ोगे तो, रंगे सियारों की खूब बन जायेगी।।

ऋषि के सपने बिखर जायेंगे, उजड़े हुए चमन में, उल्लूओं की पलटन आयेगी।

पं० संजय सत्यार्थी

वेद प्रार्थना

- आचार्य ज्ञानेश्वरार्य रोजड़

**अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं
तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि।।**

यजु.1/5

शब्दार्थ :- **अग्ने** = हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर ! **व्रतपते** = हे व्रतों के पालक, व्रतों की रक्षा करनेवाले। **व्रतं चरिष्यामि** = मैं प्रतीज्ञा करुँगा **तत् शकेयम्** = उसके पालन में समर्थ बनूँ **तत् में राध्यताम्** = मेरा व्रत सफल होवे **इदम** = वह प्रतीज्ञा यह है कि **अहम्** = आज से मैं **अनृतात्** = असत्य से छूट कर **सत्यम्** = सत्य का ही **उपैमि** = पालन करूँगा।

व्याख्या :- हे सर्वव्यापक अग्निदेव! आप स्वयं व्रतों के पालक हो, आप अपने नीति-नियमों, विधि-विधानों, व्रतों-संकल्पों को कभी भी नहीं तोड़ते हो, सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, पालन, संरक्षण, जीवों को वेदों का ज्ञान व कर्मफल प्रदान, मन में अच्छे-बुरे की पहचान का संकेत आदि सभी कार्यों को यथा-समय करते हो, उनमें कभी भी, किंचित् मात्र भी न्यूनता नहीं होती है।

हे व्रतों के स्वामिन्! हम मनुष्यों की स्थिति तो यह है कि अच्छे कार्यों को करने और बुरे कार्यों को न करने का व्रत तो अनेक बार धारण करते हैं किन्तु अपने ही आलस्य, प्रमाद, विस्मृति तथा अनेक प्रकार के प्रतिकूलताओं, बाधाओं, कष्टों के उपस्थित होने पर, उन व्रतों के पालन में शिथिलता आ जाती है, उनका पालन छूट जाता है। किन्तु हे व्रतपते परमेश्वर! अब हमारी समझ में यह अच्छे प्रकार से आ गया है कि यदि संसार में सुख, शांति, निर्भीकता, संतोष, स्वतंत्रा आदि की स्थिति बनाये रखनी है तो हमे आप द्वारा किये गये निर्देशों का पालन करना ही पड़ेगा। यदि हम आप द्वारा निर्दिष्ट विधि-विधान, जो वेद में उल्लेखित हैं उनका संकल्पपूर्वक, पूर्ण पुरूषार्थ, त्याग तपस्यायुक्त, सतर्कता, सावधानी से पालन करेंगे तो सुख ही मिलेगा, इसके विपरित उन नियमों, विधि-विधानों का पालन नहीं करेंगे तो निश्चित ही आपकी ओर से दुःख ही मिलेगा, यह आपका नियम है। हम अपने बुद्धि से, तात्कालिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर आपके नीति नियमों में, वेद आदि सत्य शास्त्रों के सिद्धांतों में, ऋषियों के संदेशों में परिवर्तन, परिवर्द्धन, संशोधन कर देते हैं, हमारी आप पर, आपके नीति नियमों पर, पूर्ण श्रद्धा नहीं है, पूरा विश्वास नहीं है। हम स्वयं को आप से अधिक बुद्धिमान समझ लेते हैं। यहीं से

हमारी भूलें प्रारम्भ हो जाती हैं।

अग्निदेव! आज मैंने यह दृढ़ निश्चय किया है कि जैसे आपने वेदों में लिखा है, ऋषियों ने शास्त्रों में वर्णन किया है, महापुरूषों ने जैसा व्यवहार किया है वैसा ही मैं भविष्य में आचरण करुँगा। सत्य, धर्म, न्याय, त्याग, तप, निष्कामता के पालन का व्रत धारण करता हूँ और असत्य, अधर्म, अन्याय, स्वार्थ, आलस्य, सकामता के परित्याग का संकल्प करता हूँ। हे प्रभुदेव! अब मेरी समझ में आ गया है कि बिना संकल्पों के साधना नहीं होगी और साधनों का संग्रह भी नहीं होगा और बिना साधना के, बिना तपस्या के, सिद्धि की प्राप्ति नहीं होगी, जितने भी महापुरूष हुए हैं, उन सभी के अपने प्रयोजनों, लक्ष्यों, उद्देश्यों की प्राप्ति में व्रतों, संकल्पों, प्रतिज्ञाओं ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है, इसलिए आज इस महान् साधन 'व्रत' को अपना रहा हूँ।

हे इष्ट देव! मैंने अब तक यह अनुभव किया है कि व्रतों के पालन करने हेतु मनुष्यों को अनेक प्रकार की बाधाओं से, आपत्तियों से जूझना पड़ता है, संघर्ष करना पड़ता है। आलस्य, प्रमाद, लापरवाही, लोभ, कष्ट, दुःख, भूख-प्यास, अपमान, आरोप, विरोध आदि अनेक प्रकार के बाधक इन व्रतों के पालन करते समय उपस्थित हो जाते हैं। मैं अकेला अल्पज्ञ, अल्पशक्तिमान् इन संकल्पों का पालन करने में नितान्त असमर्थ हूँ, यह मैंने पिछले जीवन में प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया है।

इसलिए आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप अपने व्रतों के पालक व रक्षक तो हैं ही मेरे व्रतों-संकल्पों के रक्षक, पालक, सहयोगी तथा मार्गदर्शक बन जाओ। मुझ में इतनी शक्ति, साहस, बल, ज्ञान, पराक्रम एवं उत्साह प्रदान करो कि किसी भी परिस्थिति में असत्य के समक्ष झुकूँ नहीं, अधर्म के आगे परास्त न होऊँ, अन्याय के सामने घुटने न टेकूँ तथा मैं तन-मन-धन लगाकर, बल्कि प्राणों का बलिदान देकर भी सत्य का पालन करुँ। जैसा मैंने देखा है, सुना है, जैसा मैंने पढ़ा है, जाना है, अनुमान लगाया है, जैसा मेरे मन में ज्ञान है वैसा ही वाणी से बोलूं, शरीर से करूं। भगवन्! मैं जानता हूँ कि सत्य पर चलना तलवार की धार पर चलना है, किन्तु जब आप का साथ मिल जायेगा, आपका बल, साहस, पराक्रम, विज्ञान मिल जायेगा तो सब कुछ सम्भव हो जायेगा। आप जिसके साथ हैं, आप जिसके सहयोगी हैं, उसको क्या कठिनाई होगी? कुछ भी हो, हमें आप पर पूरा भरोसा है कि आप हमारे व्रतों के पालन करने में हर प्रकार से सहायता करेंगे।

बुद्धि प्राप्ति की सर्वोत्तम प्रार्थना के कारण गायत्री मंत्र ईश्वर रचित है

- मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

गायत्री मन्त्र, ईश्वर से की जाने वाली अनेकानेक सर्वश्रेष्ठ प्रार्थनाओं में से एक मन्त्र है। पहले गायत्री मन्त्र को प्रस्तुत कर उसके शब्दों व अर्थों को देख लेते हैं। **'ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोद्यात्।'** मन्त्र के पहले तीन पदों या शब्दों, भू, भुवः व स्वः में कहा गया है कि ईश्वर हमें प्राणों से भी प्रिय है, वह दुःखों से रहित व जिसकी प्रार्थना-उपासना से भक्त के दुःख सर्वथा छूट जाते हैं, वही ईश्वर सुख स्वरूप भी है जो अपने उपासकों को आरोग्य, दीर्घ आयु, विद्या, सुख-सम्पत्ति व यश एवं कीर्ति आदि धन प्रदान करता है। 'तत्सवितुर्वरेण्यम्' में कहा गया है कि परमेश्वर सूर्य आदि समस्त संसार का रचयिता है, वही हमारा उपासनीय व स्तुति-योग्य है। 'भर्गो देवस्य धीमहि' पद कह रहे हैं कि हम सारे संसार का उपकार करने वाले उस ईश्वर के दिव्य गुणों को अपने जीवन व व्यवहार में धारण करें। 'धियो यो नः प्रचोदयात्' में कहा गया है कि वह ईश्वर हमारी बुद्धियों को श्रेष्ठ मार्ग में चलने की प्रेरणा दें। इस मन्त्र में हमने देखा कि उपासक ईश्वर को उपासनीय मानकर उससे श्रेष्ठ बुद्धि की प्रार्थना कर रहा है। इस मन्त्र पर विचार करने से एक बात तो यह सामने आती है कि उपासना ईश्वर को जान गया है कि हमसे भिन्न एक ऐसी सत्ता है जो हमारे प्राणों से भी मूल्यवान है, दुःख रहित है और हमारे दुःखों को दूर करने वाली है तथा हमें सुखों को प्राप्त भी कराते हैं। संसार का यह नियम है कि प्रार्थना उसी से कोई करता है जिसके पास माँगी जा रही वस्तु या वस्तुयें प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है और उसका देने का स्वभाव होता है।

गायत्री मन्त्र में ईश्वर व उसके गुणों की चर्चा है जो सभी मनुष्यों के लिए आवश्यक एवं उपयोगी है। यह प्रार्थना मन्त्र अस्तित्व में कैसे आया इस पर विचार करते हैं। पहली शंका तो यह है कि इसे वस्तुतः मनुष्यों ने बनाया या नहीं? मनुष्य यदि बनायेंगे तो उनके पास भाषा का ज्ञान होना चाहिए जिसमें यह बना है। भाषा संस्कृत है। भाषा का ज्ञान होने पर उसमें प्रार्थना, उपासना व स्तुति के श्लोक पद्य व गद्य में रचना की जा सकती है। जहाँ तक मूल भाषा का प्रश्न है, मनुष्य उस सर्व प्रथम मूल भाषा को नहीं बना सकते। इसके लिए प्राचीन काल में कई

प्रयोग भी हुए जिनसे ज्ञात हुआ कि अक्षर, पद व वाक्य जो भाषा के मूल आधार हैं, उन्हें बनाने में मनुष्य समर्थ नहीं है। इतिहास व शब्द प्रमाणों के आधार पर वेद भाषा अपौरूषेय सिद्ध होती है। अपौरूषेय का अर्थ वह कार्य है जो मनुष्य कदापि नहीं कर सकता। वह ईश्वर के द्वारा किये गये होते हैं। वैज्ञानिक कहते हैं कि ऐसे कार्य स्वतः या अपने-आप होते हैं। यह बुद्धि का दुरूपयोग है। बुद्धि-पूर्वक की गई कोई भी रचना अपने-आप कभी नहीं होती, वह यदि अपौरूषेय है, तो निश्चित रूप से ईश्वर के द्वारा की गई होती है। अतः वैज्ञानिकों की अपौरूषेय रचनाओं यथा ब्रह्माण्ड, सृष्टि व इसमें वन, पर्वत, जल, वायु, अग्नि को जड़-प्रकृति द्वारा, स्वतः या अपने-आप रचा हुआ मानने का सिद्धान्त असत्य या गलत है। अतः सभी अपौरुषेय रचनायें ईश्वर द्वारा की गई हैं। ईश्वर ने गायत्री मन्त्र को क्यों बनाया, इस पर विचार करना भी उपयोगी है। ईश्वर ब्रह्माण्ड के सभी जीवों का कल्याण करना चाहता है। तर्क व प्रमाणों से सिद्ध है कि जीव अपने कर्मानुसार जन्म पाते हैं। जीवों का जो पार्थिव शरीर होता है वह नाशवान होता है। जन्म के पश्चात कुछ समय इसमें वृद्धि होती है, उसके पश्चात स्थिरता आती है और बाद में वृद्धवस्था आकर मृत्यु हो जाती है।

कर्म व्यवस्था में मनुष्यों के पुण्य व पाप कर्म, कर्मों की प्रकृति के भेद से दो प्रकार के होते हैं। ईश्वरीय व्यवस्था से पुण्य कर्मों का फल सुख रूप में तथा पाप कर्मों का फल दुःख रूप में प्राप्त होता है। इस कारण एक अच्छे व्यवस्थापक या रचयिता होने के कारण ईश्वर का यह दायित्व बनता है कि वह सभी मनुष्यों को अपने स्वरूप का ज्ञान करायें, जीवों को भी उनके स्वरूप का ज्ञान कराना उसका कर्तव्य बनता है अन्यथा जीव अज्ञानी रहेगा और वह पाप-पुण्य का बोध न होने के कारण फल का उत्तरदायी बन सकेगा। ईश्वर इस सृष्टि की कारण अवस्था व कार्य अवस्था तथा जीवों के सभी प्रकार के कर्तव्यों व अकर्तव्यों का भी बोध कराता है जो कि उसका दायित्व है। ईश्वर अपने इस दायित्व को सृष्टि के आरम्भ में वेदों का ज्ञान देकर पूरा करता है। जो इस ज्ञान के यथार्थ स्वरूप का प्रचार-प्रसार करते हैं वह ईश्वर की व्यवस्था से सुख वह उन्नति अर्थात् अपवर्ग-मोक्ष-मुक्ति के भागी होते हैं, जो प्रचार नहीं करते, स्वार्थ सिद्ध करते हैं, लोगों को गुमराह करते और नाना प्रकार के सामान्य जनों को वेदों से दूर करते हैं वह सब, ईश्वर के दण्ड के भागी होते हैं। अतः ईश्वर ने जहाँ मनुष्यों को वेदों के माध्यम से कर्तव्य व अकर्तव्य का बोध

कराया, वहीं मनुष्यों को गायत्री मन्त्र के द्वारा यह ज्ञान दिया कि जीवों को ईश्वर से प्रेम करना चाहिए जिसका आधार ईश्वर भक्ति व योगाभ्यास है। ईश्वर के विचार, ध्यान व चिन्तन तथा भद्र को धारण व अभद्र के त्याग से ही हमारे सभी दु:ख दूर होंगे व सुख की प्राप्ति होगी। इसके लिए सर्वाधिक वरणीय यदि संसार में कुछ है तो वह ईश्वर ही है। ईश्वर हमारा आचार्य, राजा, न्यायाधीश, नेता व सर्वस्व है। इस प्रकार ईश्वर को जानकर व मानकर, स्तुति, प्रार्थना व उपासना करके ईश्वर को पूर्ण समर्पण करना व उससे प्रार्थना करना कि वह हमारी बुद्धि मार्ग पर चलने की प्रेरणा करे जिससे हम जीवन के उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष तथा अभ्युदय व नि:श्रेयस को प्राप्त कर जीवन को सफल कर सकें।

इतिहास में हम पाते हैं कि सृष्टि के आरम्भ से आज तक सभी विद्वान, देव, आचार्य, गुरु, ऋषि, मुनि, यति, योगी, राम, कृष्ण, शंकराचार्य, दयानन्द आदि ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना कर अपना जीवन सफल मानते रहे हैं। उनके अन्दर आत्म-सन्तोष व प्रसन्नता तथा सुख का भाव देखा गया है। इसके विपरीत जीवन जीने वालों पर भी यदि दृष्टि डालें तो हम पाते हैं कि वे येन केन प्रकारेण धन-दौलत की प्राप्ति में लगे हैं और धर्म, कर्म, योग, ईश्वरोपासना, यज्ञ, सत्संग, स्वाध्याय, चिन्तन, ध्यान व समाधि से उन्हें कुछ लेना देना नहीं है। उनके द्वारा भौतिक सुख सामग्री का अत्यधिक भोग हो रहा है जिससे स्थिति यहाँ तक पहुँच गई है कि प्रकृति में असन्तुलन पैदा हो गया है। आज न वायु शुद्ध और न समुद्र, नदियों, कुओं व वर्षा का जल ही। वृक्षों को अन्धाधुन्ध काटने व औद्योगिक विस्तार से जीवन रोगों का घर बन गया है, जहाँ अकाल मृत्यु, दु:ख व भय का वातावरण है। अत: सच्ची आध्यात्मिकता के प्रचलन व व्यवहार से तथा जीवन को अध्यात्म से भर कर ही मानव जीवन को दु:खों से मुक्त किया जा सकता है।

गायत्री मन्त्र में ईश्वर से बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करने की प्रार्थना की गई है। आजकल की तरह धन, सम्पत्ति, भौतिक सुख साधन यथा भव्य बंगला, कार, बैंक बैलेन्स व पुत्र आदि नहीं माँगा गया है। इस मन्त्र में निहित उत्तमोत्तम शिक्षा व विचार से संकेत मिलता है कि यह मनुष्यों द्वारा निर्मित न होकर ईश्वर के द्वारा प्रदत्त है। बुद्धि की प्रार्थना इसलिए की गई हैं कि बुद्धि सत्य व असत्य का विवेचन करती है। इससे ज्ञान उत्पन्न होता है। यह ज्ञान संसार के सभी प्रकार की भौतिक सुख सामग्री भी एकत्रित की जा सकती है। ज्ञान से दु:खों की निवृति होती है

और जीवन सफल होता है। आज संसार में अज्ञान, दु:ख, भय, चिन्ता, द्वेष, शत्रुता, भ्रष्टाचार आदि का बोलवाला है। इसका कारण यथार्थ ज्ञान को उत्पन्न करती है जो अभ्युदय व नि:श्रेयस अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति का साधन है। अत: गायत्री मन्त्र आज भी प्रासंगिक व उपादेय है एवं प्रलय पर्यन्त उपयोगी रहेगा। ईश्वर की हम पर अहेतुकी कृपा का परिणाम ही वेदों का ज्ञान व गायत्री मन्त्र है। हमें ईश्वर का कृतज्ञ रहना है और सात्विक बुद्धि प्राप्त कर समाज, देश व विश्व का कल्याण करना है। गायत्री मन्त्र को प्रत्येक मानव तक पहुँचाना है जिससे स्वार्थी लोग भोले-भाले मनुष्यों को मूर्ख न बना सके। इसकी रक्षा करते हुए इसका अधिक से अधिक प्रचार करना है। इस मन्त्र में निहित विचारों को धारण कर हम सभी अपना जीवन आदर्श बनायें व दूसरों को इसकी सतत् प्रेरणा करते रहें।

एक अन्य दृष्टि से गायत्री मन्त्र की उपायेदता पर विचार करते हैं। गायत्री मन्त्र से जिस ईश्वर से बुद्धि को श्रेष्ठ मार्ग में प्रेरित करने की प्रार्थना है, वह चेतन व सृष्टिकर्ता, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ व सर्वान्तरयामी परमेश्वर है। यह उपासना जड़ मूर्तियों की पूजा से सर्वथा भिन्न है। जड़ पूजा, गायत्री मन्त्र से उपासनीय ईश्वर का विकल्प नहीं हो सकती। यदि यूरोप आदि व वैज्ञानिकों को देखें, जिन्होंने बड़े-बड़े आविष्कार किये हैं, तो उसका कारण उनके द्वारा बुद्धि का सदुपयोग है। उन्होंने ईश्वर की उपासना भी नहीं की। वह केवल सृष्टि के जड़ व मूर्तिमान पदार्थों पर विचार, चिन्तन व ध्यान करते थे। उस ध्यान-चिन्तन से पदार्थ के स्वरूप का ज्ञान उन्हें प्राप्त हुआ जिसका परिणाम विज्ञान की खोजें, वैज्ञानिक उपकरण, सुख-सुविधा की अनेक वस्तुयें एवं आधुनिकता है जिसमें ज्ञान-विज्ञान का अधिकतम् उपयोग है। दूसरी ओर हमारे देश के लोग मध्यकाल से निराकार व सर्वान्तर्यामी जगत-पति की उपासना को छोड़कर जड़ वस्तुओं यथा मूर्ति व अनेक अनावश्यक, अनुपयोगी, तर्क व बुद्धि के प्रतिकूल कर्मकाण्डों, साधनाओं, जल-सरोवरों व गंगा आदि नदियों में स्नान व इसी प्रकार की अतार्किक पूजा आदि क्रियाओं में लगे रहे। यह सस्ता सौदा था जो हमें वास्तविक उद्देश्य से दूर ले जाकर जीवन को हानि पहुँचाता रहा व पहुँचा रहा है। इससे हमारा सार्वत्रिक पतन हुआ। महाभारत काल व उसके कुछ बाद तक हमारे देश में जड़ पूजा नहीं थी तब तक हम सभी प्रकार के वैभवों से सम्पन्न व समृद्ध थे। हमारे यहाँ उपनिषद्, दर्शन, मनुस्मृति, बाल्मिकी रामायण, महाभारत, अष्टाध्यायी, महाभाष्य,

निरूक्त, निघण्टु जैसे ज्ञान के स्रोत पैदा हुए। जड़ पूजा ने हमें सचेतन-निराकार ईश्वर की पूजा से दूर कर हमें सभी उपलब्धियों से वंचित कर दिया। हम गुलामी, अपमान, निर्धनता, अभाव, दुःख के सागर में गिर गये जहाँ हमारा अस्तित्व ही समाप्त होने को था, पर सौभाग्य से परमात्मा ने एक दिव्य महापुरूष दयानन्द को भेजकर हमारी रक्षा की। महर्षि दयानन्द ने बताया कि जड़ पूजा को छोड़कर चेतन, आनन्दस्वरूप व निराकार ईश्वर की पूजा उसके गुण-कर्म-स्वभाव का विचार, चिन्तन-मनन व ध्यान द्वारा करें। उन्होंने बताया कि हिन्दू-ईसाई-इस्लाम धर्म नहीं अपितु मत, सम्प्रदाय, या मजहब हैं। धर्म तो सत्याचरण, परोपकार, न्याय व पक्षपात रहित होना, ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानकर उसका ध्यान व उसकी प्राप्ति में विचरण करना, यज्ञ करना, वेदाचार, माता-पिता की सेवा आदि करना ही वास्तविक धर्म है। हमारा अनुभव है कि गायत्री मन्त्र को उपासना में सम्मिलित कर लेने से आध्यात्मिक व भौतिक सभी प्रकार के लाभ होते हैं। हमने प्रमाणिक ग्रन्थों में पढ़ा है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के अजमेर में देहावसान से पूर्व भयंकर शारीरिक कष्ट के समय में मौन रहते हुए मन में गायत्री मन्त्र का जप करते थे तथा भयंकर शारीरिक पीड़ा होते हुए उन्होंने कभी उफ़ भी न की। गायत्री मन्त्र के विचार, चिन्तन, ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना से सभी साधक-उपासकों की सभी कामनायें सिद्ध होती हैं व जीवन सफल हो सकता है। इससे भिन्न अन्य कोई वैकल्पिक मार्ग जीवन को सफल बनाने का नहीं है।

कृपा करो भगवान

ऐसी कृपा करो भगवान्।
मेरा मन डोले न ।।
रहे हरपल तुम्हारा ही ध्यान।
मेरा मन ....।।

ऐसा रस रसना में भर दो।
मन के बिगड़े भाव सँवर दो।।
दे दो अमृतमय वेदों का ज्ञान।
मेरा मन ....।।

जगत् पिता जगदीश्वर मेरे।
उज्जवल मन करो दूर अन्धेरे।।
तेरी कृपा बड़ी है महान्।
मेरा मन ....।।

तेरी रचना तेरी माया।
हर प्राणी ने मन उलझाया।।
तेरी रहमत से है वे जहान।
मेरा मन ....।।

वेदश्चक्षुः सनातनम्

- आचार्या प्रियंवदा वेद भारती

यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम्।
तामाभृत्या व्यदधुः पुरुत्रा तां सप्त रेभा अभि सं नवन्ते॥

आर्यसमाज का तीसरा नियम है, "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है वेद का पढ़ना, पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" वेद सप्ताह के प्रथम दिवस महर्षि द्वारा प्रणीत आर्यसमाज के इस नियम पर हम गंभीरता से विचार करें। महर्षि ने इसमें वेद के पठन-पाठन को धर्म ही नहीं परम धर्म बताया है। अपने ग्रन्थों में, भाषणों में वेदों को ऋषि ने इतना ऊँचा स्थान दिया, इतनी महिमा प्रदान की कि भगवद्गीता, रामायण, रामचरित-मानस आदि में आस्था रखनेवाले अनेक महानुभावों का हृदय उद्वेलित हो गया। महात्मा गांधी ने एक स्थान पर लिखा कि "दयानन्द ने वेदों के एक-एक मन्त्र को पुजवा दिया है" इससे यही प्रतीत होता है कि इनकी दृष्टि में वेदों को इतना महत्व नहीं दिया जाना चाहिए था। महात्मा गांधी बाइबिल, कुरान, गीता, वेद सभी को एक दृष्टि से देखते थे। वेदों के प्रति उनकी कोई विशेष आस्था नहीं थी। अनेक प्रतिष्ठित गणमान्य महानुभावों की भी यही स्थिति है अतः आज हम इसी विषय को रखना चाहेंगे कि ऋषिवर दयानन्द जिस प्रकार वेदों के प्रति आस्थावान् थे उसी प्रकार अन्य ऋषि महर्षि भी वेदों के प्रति आस्थावान थे या नहीं? तो आइये! ऐतिहासिक दृष्टि से अवलोकन करते हैं।

लौकिक संस्कृत साहित्य में सबसे प्राचीन ग्रन्थ जो हमें प्राप्त होता है वह है- रामायण। रामायण में वेदों के प्रति अनन्य आस्था दिखाई देती है। दशरथ, राम और उनके मन्त्रिपरिषद् के विषय में कहा जाता है कि वे सभी वेद-वेदांग के अध्येता ही नहीं उनके तत्त्वों को भी जाननेवाले थे। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि रामराज्य ही नहीं रावण राज्य एवं वानर राज्य में भी वेदों का अध्ययन-अध्यापन होता था। लंका में जब भगवती सीता को खोजते हुए हनुमान् जाते हैं तो वहाँ घर-घर से जिस ध्वनि को सुनते हैं वह ध्वनि वेदमन्त्रों की थी- **"शुश्राव ब्रह्मघोषांश्च क्रतुप्रवरयाजिनाम्"।** इसी प्रकार जिस समय हनुमान् और लक्ष्मण का परस्पर वार्तालाप होता है वहाँ हनुमान की सुन्दर वक्तृता से प्रभावित होकर राम कहते हैं-

नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेवं प्रभाषितुम्।।

हनुमान् की बातों से पता चलता है कि उन्होंने ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद तीनों वेदों का अध्ययन किया है, क्योंकि बिना वेदों के अध्ययन किए ऐसी सुन्दर बात कोई कर ही नहीं सकता। यहाँ तीन वेदों के नामपूर्वक उल्लेख होने से आप इस भ्रान्ति में न रहें कि चौथा वेद अथर्ववेद रामायण काल में नहीं था बाद में बना है। वस्तुतः मन्त्ररचना की गद्य, पद्य और गान तीन ही विधायें हैं और ये तीनों विधायें चारों वेदों में प्राप्त होती हैं। सर्वानुक्रमणी की भूमिका में आचार्य षड्गुरुशिष्य ने इसी बात को श्लोकबद्ध करते हुए लिखा है-

ऋक् पादबद्धो गीतस्तु साम गद्यं यजुर्मन्त्रः।
चतुर्ष्वपि हि वेदेषु त्रिधैव विनियुज्यते॥

अर्थात् पादबद्ध मन्त्र ऋक्, गीतात्मक साम और गद्यात्मक मन्त्र यजुष् है। चारों वेदों में इन्हीं तीन प्रकारों से मन्त्र विनियुक्त हैं इन्हीं त्रिविध मन्त्रों को दृष्टि में रखकर वेद को त्रयी भी कहा जाता है। यदि रामायण काल में अथर्ववेद का अस्तित्व न होता तो इस वेद की चर्चा भी न होती किन्तु बालकाण्ड में स्पष्ट चर्चा आती है-

अथर्वशिरसि प्रोक्तैः मन्त्रैः सिद्धां विधानतः।

-बाल० १५।२

ऋष्यश्रृंग ऋषि ने अथर्ववेद के मन्त्रों से पुत्रेष्टि यज्ञ कराया। इस प्रकार रामायण काल में अयोध्या, किष्किन्धा तथा लंका तीनों ही राज्यों में वेदों का पठन-पाठन होता था। विशेषरूप से सभी अयोध्यावासी वेद-वेदांग के जानने वाले थे, उनके प्रति पूर्ण आस्थावान् थे और **'मन्त्रश्रुत्यं चरामसि'** वेदानुकूल आचरण भी करते थे। भगवान् श्री राम ने वैदिक मर्यादाओं को अपने जीवन में अक्षरशः पालन किया इसलिये वे मर्यादापुरुषोत्तम कहलाये। रामायण के बाद दूसरा प्रसिद्ध ग्रन्थ आता है महाभारत। महाभारत के बनानेवाले महर्षि कृष्ण द्वैपायन व्यास हैं। व्यास महर्षि ने वेदों के प्रति जो आस्था प्रकट की है वह ध्यान देने योग्य है-

अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा।
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वाः प्रवृत्तयः॥

वेदवाणी अनादिनिधना- आदि और अन्त रहित है। यहाँ आप प्रश्न कर सकते हैं कि वेद आदि और अन्त रहित कैसे हैं? क्योंकि जो वेद पुस्तकाकार दिखाई देते हैं एक दिन इनके पन्ने गलकर समाप्त हो जाएँगे भला ये नित्य कैसे हो सकते हैं? इस शंका का समाधान इस प्रकार समझें कि पुस्तक रूप वेद तो निश्चय ही अनित्य हैं लेकिन वेदरूपी ज्ञान अपने आप में नित्य है क्योंकि वह परमात्मा का ज्ञान है। परमात्मा अनादि तत्व है, एकरस है अजर-अमर-अविनाशी है। सृष्टि के प्रलय हो जाने पर भी रहता है इसलिए उसमें रहनेवाला

वेद ज्ञान भी नित्य है, अविनाशी है। इसी को दृष्टि में रखकर महाभारतकार ने कहा- "अनादिनिधया नित्या" कि वेदवाणी नित्य है और आदि अन्त रहित है। यह वाणी किसके द्वारा प्रदत्त है? और किस समय दी गई? इन दो प्रश्नों को समाधान करते हुए महर्षि व्यास ने कहा "स्वयंभुवा" स्वयंभू=परमेश्वर ने उस वेदवाणी को आदौ=सृष्टि के आदि में प्रदान किया। अनेक पाश्चात्य विद्वानों का और उनके अनुयायी भारतीय विद्वानों का मानना है कि चारों वेदों की रचना क्रमशः हुई है। सबसे पहले ऋग्वेद और सबसे बाद में अथर्ववेद प्रकाश में आया। उनकी दृष्टि में ऋग्वेद की रचना भी एककालिक न होकर अनेक बार हुई है। इतना वे अवश्य स्वीकार करते हैं कि ऋग्वेद सबसे पुरानी रचना है। Rigved is the oldest book of human library.

इन लोगों का यह भी मानना है कि सारी सृष्टि मात्र छह हजार वर्ष पुरानी है। सृष्टि को छह हजार वर्ष में समेट देने की कल्पना भारतीय पण्डितों तथा ऋषि-मुनियों के सर्वथा विरूद्ध है। यहाँ के पण्डित आज से नहीं प्राचीन काल से यज्ञ, याग, विवाह संस्कार आदि के शुभारम्भ में यह संकल्प पढ़ते आये हैं- **'ओं तत्सत्सृष्टेः सचराचरस्य जगतः श्री ब्रह्मणो द्वितीये प्रहरार्द्धे सप्तमे वैवस्वत-मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे एकवृन्द-सप्तनवतिकोटि-एकोनत्रिंशल्लक्ष-एकोनपञ्चाशत् सहस्रपञ्चदशोत्तरशततमे सर्गाब्दे...'** इस संकल्प में एक अरब सत्तानवे करोड़ उन्तीस लाख उनञ्चास हजार एक सौ पन्द्रह वर्ष[1] पुरानी सृष्टि हो चुकी है यह कहा गया है। इसके अतिरिक्त खुदाई में नौ लाख वर्ष तक के पुराने नर कंकाल भी पुरातत्त्वविदों को मिल चुके हैं। इन सब प्रमाणों से स्पष्ट है कि सृष्टि मात्र छह हजार वर्ष पुरानी नहीं अपितु बहुत पुरानी है।[2]

महाभारत में एक महत्त्वपूर्ण बात यह भी कही- "आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वाः प्रवृत्तयः" कि दुनियाँ में जितनी भी प्रवृत्तियाँ हुईं, जितने भी नाम रखे गये वसिष्ठ, विश्वामित्र, गंगा, यमुना, सरस्वती आदि सब वेदों से लेकर रखे गए। समस्त नाम, अर्थ, नामार्थ सम्बन्ध वेद से ही लिये गये। इस बात को महर्षि मनु ने भी - **"सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक्-पृथक्। वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे।"** कहकर स्वीकार किया है। इस प्रकार महर्षि व्यास ने बड़ी सुन्दरता से कई सिद्धान्तों को एक छोटे-से श्लोक में समाहित कर दिय कि वेदवाणी अनादिनिधता है, नित्य है। स्वयं परमेश्वर द्वारा सृष्टि के आदि में दी गई है

और उससे ही सारी दुनिया के लोग सब व्यवहार किया करते हैं।

रामायण महाभारत के अनन्तर संसार के प्रथम संविधान निर्माता मनु महाराज की मनुस्मृति पर दृष्टिपात करें। मनुस्मृति में वेदों के प्रति जो श्रद्धा प्रकट की गई है वह अन्यत्र दुर्लभ है। मनु कहते हैं-

"पितृदेवमनुष्याणां वेदश्चक्षुः सनातनम्"

पितरों की, देवों की, मनुष्यों की सनातन चक्षु वेद है। इस बात को विस्तार से इस प्रकार समझें- तीन प्रकार के लोग होते हैं- पितर, देव, मनुष्य। जो अपने ही परिवार के पालन-पोषण में विशेष रूप से लगे रहते हैं ऐसे लोगों को शास्त्रों में पितर शब्द से सम्बोधित किया गया है। व्यक्तियों की दूसरी कोटि है मनुष्य, जो कि अपने स्वार्थ में अपने परिवार को भी नहीं देखते केवल अपना ही देखते हैं। देव वे हैं जो परिवार के साथ समाज का विशेष हित करते हैं। मनु महाराज कहते हैं चाहे आप पितर कोटि के हों, चाहे मनुष्य कोटि के हों, और चाहे आप देव कोटि के हों सब लोगों की एक ही सनातन आँख है वेद जिससे आप सब कुछ देख सकते हो। सब मनुष्यों को वेद द्वारा ही अपने-अपने कर्त्तव्यों का बोध होता है इसलिए वेद को ही अपना चक्षु बनाकर उससे मार्गदर्शन प्राप्त करना चाहिये। मनु महाराज "सर्वज्ञानमयो हि सः" वेदों को समस्त ज्ञान-विज्ञान का भण्डार भी मानते हैं। उन्होंने इस सिद्धान्त को विस्तार से वर्णित करते हुए कहा है-

सेनापत्यञ्च राज्यञ्च दण्डनेतृत्वमेव च।
सर्वलोकाधिपत्यञ्च वेदशस्त्रविदर्हति॥

सेनापति बनना हो या राज्याधिकारी, न्यायाधीश बनना हो या सारे भूमण्डल में अपना साम्राज्य स्थापित करना हो, वेद शास्त्र का ज्ञाता ही इन क्षेत्रों में पूर्ण सफल हो सकता है। तात्पर्य यह हुआ हम दुनियाँ का कोई भी काम करना चाहें किसी भी क्षेत्र में जाना चाहें वेद अध्ययन की अनिवार्यता सर्वत्र है। वेद के पढ़ने से ही मनुष्य उस काम को पूर्णता-दक्षता तथा सुचारूता के साथ कर पाएगा। इतना ही नहीं गृहस्थ का कुशल सञ्चालन भी महर्षि मनु के में वेद द्वारा ही सम्भव है। गृहस्थियों के लिये आदेश दिया-

वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्।
अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत्॥

-मनु० 3।2

क्रम से चारों वेद, तीन, दो अथवा एक वेद को साङ्गोपाङ्ग पढ़के और जिसका ब्रह्मचर्य खण्डित न हुआ हो वह पुरुष वा स्त्री गृहाश्रम में प्रवेश करे। मनु के इस निर्देश से सिद्ध होता हे

कि गृहस्थाश्रम में हर व्यक्ति को नहीं जाना चाहिए। पूर्ण विद्यावान, वेदज्ञ, स्वस्थ, नीरोगी मनुष्य ही गृहस्थ में जाने योग्य है किन्तु आजकल ये सारी बातें व्यर्थ-सी प्रतीत होती हैं। आजकल के माँ-बाप तो अपनी सन्तानें कैसी भी हों, अपंग हों, विक्षिप्त हों, पागल हों, उनका विवाह अवश्य करना चाहते हैं। हम अपना भार उतारकर राष्ट्र के लिए भार स्वरूप सन्तान सौंप दें यह कहाँ तक उचित है? मनु महाराज ने इस श्लोक के द्वारा बहुत सुन्दर संकेत दिया है कि प्रत्येक गृहस्थ का दायित्व है कि परिवार में अच्छी सन्तति का निर्माण करके राष्ट्र का निर्माण करें। गृहस्थ में जाने के लिए मनु के अनुसार सर्वाधिक योग्य व्यक्ति है "वेदान् अधीत्य" तीन अथवा चार वेदों को पढ़ने वाला अर्थात् पूर्ण वेदज्ञ, यदि आपके पास किसी कारणवश इतना समय नहीं है तो मनु कहते हैं "वेदो वा" दो वेद पढ़ लीजिए और दो वेद पढ़ने का भी समय नहीं है तो "वेदं वा" एक ही वेद पढ़ लीजिए। अर्थात् गृहस्थ-आश्रम में जाने से पहले न्यूनातिन्यून एक वेद का ज्ञान तो अति आवश्यक है। किन्तु जरा विचार करें, आजक विवाह की तीसरी कोटि की योग्यता भी प्राप्त करने का समय नहीं है। वैदिक विचार सुनने का थोड़ा समय प्राप्त होता है विवाह संस्कार के अवसर पर किन्तु वह भी अब दुर्लभ होता जा रहा है। कारण आज संस्कार प्रक्रिया गौण है, आडम्बर ही प्रधान हैं। नाना प्रकार के आडम्बरों में पर्याप्त समय तथा धन लगाया जाता है और जब विवाह संस्कार के समय कुछ समझाने की बात आती है तो विवाह कराने वाले पण्डितजी के कान में कह दिया जाता है, "पण्डितजी! जरा जल्दी संस्कार कराइये, विदाई होनी है, एक घण्टे में ही हो जाये तो बहुत अच्छी बात है।" आतिशबाजी में कोई समय की कटौती नहीं, नाच-गाने में कोई समय की कटौती नहीं, कटौती की जाती है तो विवाह संस्कार के समय में और इधर पण्डितजी भी क्या करें? उन्हें भी एक ही दिन में कई-कई विवाह कराने होते हैं वे सोचते हैं जितनी जल्दी हो जाये अच्छी बात है। यहाँ संस्कार कराकर शीघ्र दूसरी जगह पहुँच जायेंगे। इस प्रकार विवाह संस्कार को संक्षिप्त कराने की जो चेष्टाएँ हैं वे इस बात की प्रमाण हैं कि लोग गृहस्थ के प्रति कितने असावधान हैं। विचारणीय विषय है, गृहस्थ उत्तम नहीं होगा तो ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संन्यासी कैसे उत्तम मिलेंगे। इनको उत्तम बनानेवाली फैक्ट्रियाँ आखिर गृहस्थाश्रम ही तो हैं। यदि फैक्ट्रियों में उत्पादन ही बढ़िया नहीं होगा तो फिर अन्य आश्रमों की उत्तमता की आशा कैसे की जाये? इसलिये मनुस्मृति में तो

सावधान कर दिया कि गृहस्थाश्रम में जाने के लिए वेदों का पढ़ना अनिवार्य है। "वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम्" ऋषियों के इस आदेश में धृष्टता कर यदि हम थोड़ी-सी छूट देना चाहें तो इस रूप में दे सकते हैं कि गृहस्थ में जाने से पूर्व यदि आप एक वेद भी नहीं पढ़ सकते तो कोई वैदिक ग्रन्थ तो अवश्व पढ़ें। जिससे गृहस्थ में नारी और नर की क्या मर्यादा है, क्या कर्त्तव्य है, यह सब जान सको। विवाह संस्कार में अनेक अवान्तर यज्ञों में एक राष्ट्रभृत् यज्ञ भी कराया जाता है। वह इसलिए कि गृहस्थाश्रम द्वारा दम्पती को राष्ट्र का भरण-पोषण करना है। राष्ट्र को उत्तम सन्तति बनाकर देनी है, केवल अपने आप तक ही सीमित नहीं रहना है। इस प्रकार विवाह संस्कार के समय कुछ उत्तम उपदेश जब दम्पत्तियों को दिए जायेंगे तो निःसन्देह वे राष्ट्र का निर्माण करने के लिये प्रयत्नशील रहेंगे अन्यथा गृहस्थाश्रम को मात्र भोग-विलास का आश्रम समझेंगे। खेद है कि आज इन सब बातों से अनभिज्ञ होकर दम्पती गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते हैं। परिणाम जो हो रहा है वह सभी को स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

आज राजनीति में जो दुरवस्था है वह भी वेद या वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन न होने के कारण ही है। किसी को अखबार पढ़ना आ गया, या चीख-चीख कर भाषण देना आ गया वह राजनीति में पहुँच जाता है। क्या ही आश्चर्य की बात है? एम.ए. पास होने के लिए बी.ए. पास होना जरूरी है बी.ए. बिना इण्टर उत्तीर्ण किये नहीं किया जा सकता अर्थात् किसी भी क्षेत्र में उच्चता प्राप्त करने के लिए योग्यता की आवश्यकता होती है। लेकिन राजनीति में जाने के लिये किसी डिग्री की आवश्यकता नहीं, किसी योग्याता की आवश्यकता नहीं। राजनीति एक खुला मंच है जिसमें दस्यु और दस्यु-सुन्दरियाँ भी अपना अच्छा स्थान बना लेते हैं, क्या अन्धेर है? मनु महाराज इसलिए बड़े प्रबल शब्दों में कहते है कि हर स्थान पर प्रतिष्ठित होने के लिए वेद ज्ञान की आवश्यकता है। वेद के ज्ञान से विभूषित लोग जहाँ जायेंगे वहीं वैदिक आदर्श स्थापित करेंगे। आज हमारे देश में जितनी भी समस्यायाएँ हैं वे कदापि उत्पन्न न होतीं यदि सभी वेद का अध्ययन करते रहते। हमारा भारत देश कभी वैदिक शिक्षाओं को अपनाने के कारण ही विश्वगुरु कहा जाता था। वैदिक शिक्षाओं से ओतप्रोत होने के कारण हमारा चरित्र भी उत्तम था। मनु महाराज के ये शब्द सर्वदा स्मरण रखने योग्य हैं-

**एतद्देश्यप्रसूतस्य सकाशदग्रजन्मनः।
स्वं-स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां
सर्वमानवाः॥**

यह वह महान् देश है जहाँ ब्राह्मणों के चरणों में पूरे विश्व के मानव अपने-अपने चरित्रों की शिक्षा लिया करते थे। आधुनिक युग में जो चरित्र की शून्यता दिखाई देती है उसमें वैदिक ज्ञान का अभाव एक प्रधान हेतु है। हाँ, तो अब अपने पूर्व प्रकरण को ही पुनः ध्यान में लायें कि रामायण और महाभारत दोनों ही ग्रन्थों में तथा मनुस्मृति में वेदों के प्रति अनन्य आस्था के दर्शन हम सभीको प्राप्त होते हैं। इसमें यत्किञ्चित् भी सन्देह हो तो आप स्वयं इन ग्रन्थों का अध्ययन कर तथ्यों का पुनः परीक्षण कर सकते हैं। अस्तु।

मान्यवर! इसी सन्दर्भ में प्राचीन वैदिक वाङ्मय के एक-दो और उदाहरण आपके समक्ष रखना चाहूँगी। तैत्तिरीय आरण्यक में एक घटना आती है कि ऋषि भारद्वाज ने विचार किया कि मैं पूरे जीवन भर तपस्यापूर्वक, ब्रह्मचर्य पूर्वक वेदों का अध्ययन करूँगा। और वेद के रहस्य को पाने के लिए प्रयास करता रहूँगा। भारद्वाज ने तपस्या करनी प्रारम्भ कर दी। 100 वर्ष के पश्चात् उनके पास इन्द्र आये। इन्द्र ने पूछा भारद्वाज तुमने इतने समय तक तपस्या की है, वेदों का अध्ययन किया है यदि मैं तुमको एक आयु अर्थात् सौ वर्ष और दे दूँ तो तुम इससे क्या करोगो। भारद्वाज कहते हैं, "बह्मचर्यमेव अनेन चरेयम्" मुझे अगली जो आयु आप देंगे उस आयु में भी ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा और वेदों का अध्ययन करूँगा। तपस्या करते-करते दो सौ वर्ष व्यतीत हो गये अब इन्द्र फिर आकर पूछते हैं भारद्वाज यह बताओ यदि तुम्हें तीसरी आयु दे दी जाये तो "किमनेन कुर्याः" इससे क्या करोगे भारद्वाज ने फिर वही उत्तर दिया- "ब्रह्मचर्यमेव अनने चरेयम्"। इन्द्र ने तीसरी आयु भी उसको दे दी। जब भारद्वाज तीन सौ वर्ष के हो गये तो इन्द्र ने फिर पूछा और इन्द्र को वही उत्तर मिला। इन्द्र ने फिर सौ वर्ष की आयु बढ़ा दी। इस प्रकार आयु बढ़ाते-बढ़ाते दृढ़निश्चयी भारद्वाज अब चार सौ वर्ष के हो चुके हैं, बाल सफेद, दाढ़ी सफेद, वृद्धत्व अंग-अंग में आ चुका है ऐसी अवस्था को प्राप्त भारद्वाज के पास इन्द्र पुनः आते हैं। अब इन्द्र ने अगली आयु देने की बात नहीं रखी बल्कि शिक्षा देने हेतु पर्वत में से एक मुट्ठी कंकड़ अलग करते हुए बताया कि भारद्वाज! तुमने अभी तक जो ज्ञान प्राप्त किया है वह एक मुट्ठी के समान अति स्वल्प है। समस्त वेद तो पर्वत के समान अनन्त हैं अथाह हैं **अनन्ता वै वेदाः**।

वेद की थाह तुम अनेक जन्मों में भी नहीं पा सकते।

बन्धुओं! हमारे पौराणिक भाई भी कहा करते हैं कि वेद अनन्त हैं और यह कथानक में भी वेदों को अनन्त बताया गया है सुनने में यह बात एक जैसी लगती है पर वस्तुत: भिन्न है। कथानक में वेद की अनन्तता का तात्पर्य है वेद की थाह मनुष्य कई जन्मों को लेकर भी नहीं पा सकता क्योंकि मनुष्य अल्पज्ञान और अल्पसामर्थ्य वाला है और पौराणिक भाइयों की अनन्तता का अभिप्राय है वेद किसी संख्या में सीमित नहीं हैं अनन्त हैं। आज हमें जो चारों वेदों के दर्शन एक साथ हो रहे हैं ये ऋषि दयानन्द की कृपा है अन्यथा पौराणिक विद्वानों का तो यह मत था कि "मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" मन्त्रभाग और ब्राह्मणभाग दोनों का नाम वेद है। जो स्वाध्यायशील लोग हैं वे यह जानते हैं कि ब्राह्मणों के ही भाग आरण्यक हैं और आरण्यकों के ही अन्तिम भाग उपनिषद् हैं। तात्पर्य यह हुआ कि आजकल प्रत्यक्ष दिखाई देनेवाली यजुर्वेद आदि संहितायें इनकी दृष्टि में पूर्ण वेद नहीं हैं। इनके साथ इनके ब्राह्मण आरण्यक उपनिषद् आदि को सम्बद्ध कर जो सम्पूर्ण समूह होगा उसका नाम वेद है। इनके सम्पूर्ण पुस्तक समूह को आप एक साथ नहीं देख सकते यही इनकी अनन्तता है। पौराणिक विद्वानों की यह मान्यता आज भी चली आ रही है जिसके दर्शन यत्र-तत्र सभाओं में, गोष्ठियों में होते रहते हैं। इसके विपरीत ऋषिवर कहते हैं मन्त्र और ब्राह्मण दोनों को वेद कहना ठीक नहीं। पुस्तक को समझने के लिए जैसे टीकाकार टीकाओं का निर्माण करते हैं वैसे ही मन्त्रों की व्याख्याओं के लिए ऋषियों ने ब्राह्मणादि ग्रन्थों की रचनाएँ की। इसलिए ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों और आरण्यकों को व्याख्यान ग्रन्थ कहना चाहिये न कि साक्षात् वेद। वेद संज्ञा तो केवल मन्त्र भाग या संहिता भाग की है उसी को परमात्मा ने सृष्टि के आदि में दिया। इस परिप्रेक्ष में "अनन्ता वै वेदा:" का अर्थ होगा कि वेद के अर्थ अनन्त हैं। वेद अन्तहीन नहीं उनके मन्त्रों की संख्या 20 हजार के लगभग है। वेदार्थ अनन्त कैसे हैं इस विषय की संक्षिप्त चर्चा भी यदि यहाँ हो जाये तो अनुपयुक्त नहीं होगा। देखिये वेदार्थ की अनन्तता शब्दों की अनेकार्थता में ही निहित हैं इसलिये वेदार्थ भी अनन्त हो जाता है। उदाहरणार्थ- "गच्छतीति गौ:" इस व्युत्पत्ति के आधार पर गो शब्द के अनेक अर्थ हो सकते हैं। सूर्य की किरणें भी गमन करती हैं, आती-जाती

हैं वे गौ हैं, चार पैरोंवाली गाय भी गौ है, क्योंकि यह भी चरती है और यह पृथ्वी भी गति कर रही है इसलिए यह भी गौ है। अर्थात् जो भी गतिशील पदार्थ हैं उसको वेद में गौ कह सकते हैं। अब वेद में जहाँ भी गौ शब्द आयेगा उस-उस मन्त्र के उतने-उतने अर्थ प्रकट होने लगेंगे। माना कि सभी अर्थ एक साथ वहाँ सम्भव नहीं पुनरपि अध्यात्म अधिभूत अधिदेव प्रकरणवश अनेक अर्थों की सम्भावना तो है ही। ऐसी स्थिति में वेदार्थ की अनन्तता के स्पष्ट दर्शन होने लगते हैं। अस्तु।

ऋषि युग से आगे बढ़ने पर आचार्ययुग में भी वेदों की आस्था के सम्बन्ध में एक शिक्षाप्रद कथानक सुनने में आता है। मीमांसा के बहुत बड़े विद्वान् कुमारिल भट्ट कहीं रास्ते में राजमहल के नीचे से जा रहे थे तो इन्हें रुदन करती हुई एक राजकन्या का स्वर सुनाई दिया। वह विलाप कर रही थी- "किं करोमि, क्व गच्छामि, को वेदान् उद्धरिष्यति" क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, कौन वेदों का उद्धार करेगा। इस आवाज को सुनकर कुमारिल भट्ट ठिठक गये। गम्भीर चिन्तन का गम्भीर उत्तर देते हुए कहते हैं- "मा रुदिहि वरारोहे भट्टाचार्योऽस्ति भूतले" अर्थात् हे राजकन्ये! रोओ मत। विलाप मत करो। जब तक भट्टाचार्य इस संसार में जीवित है तब तक वह वेद की रक्षा करेगा। माननीय बन्धुओं! यह सत्य है कि कुमारिल भट्ट वेदों तक नहीं पहुँच पाये मीमांसा तक ही सीमित रह गये किन्तु उन्होंने राजकन्या को जो वचन वेद की रक्षा के लिये दिया था उसके लिये वे जीवनपर्यन्त प्रयत्नशील रहे यह तो कहा ही जा सकता है। कुमारिल भट्ट का काल वह काल था जब जैनियों और बौद्धों का प्राबल्य था। ये लोग भारतीयों की वेदादि ग्रन्थों के प्रति जो आस्था थी उसको नष्ट करने के लिये अनेक दुष्चक्र चला रहे थे। इन्होंने अपने गुरुकुल भी खोल रखे थे जिनका उद्देश्य था सुकुमार मति बालकों के अन्दर वेदों के प्रति अनास्था के बीज वपन करना। ऐसे अन्धकार के युग में कुमारिल भट्ट जिन्होंने राजकन्या के समक्ष वेदों की रक्षा का व्रत लिया था सोचने लगे कि इन जैनियों बौद्धों के गुरुकुलों में जाकर देखना चाहिये ये क्या-क्या षड्यन्त्र करते हैं। भट्ट प्रच्छन्न बौद्ध बनकर अर्थात् बौद्ध न होते हुए भी अपने को बौद्ध घोषित करके उनके गुरुकुल में प्रविष्ट हो जाते हैं। उन्होंने वहाँ देखा उनके गुरुजी व सभी छात्र वेदों के प्रति आस्थावान् नहीं हैं। पदे-पदे वेदों के प्रति अनास्था अश्रद्धा प्रकट करते रहते हैं ऐसी स्थिति को देख कुमारिल भट्ट का हृदय भग्न हो जाता है और वह अपने सहपाठियों के

समक्ष अपना क्रोध व्यक्त भी कर देता है। गुरुकुल में अध्ययन कर रहे अन्य ब्रह्मचारियों ने भाँप लिया कि कुमारिल भट्ट नाम का जो छात्र है वह हमारे मत का अनुयायी नहीं है। ये तो ऊपर से बौद्ध बना हुआ है। इसलिए उन्होंने एक योजना बनाई कि तिमंजले पर चढ़ करके एक दिन भट्ट कुमारिल को किसी प्रकार धक्का दे देंगे ये नीचे गिर जाएगा और इसका जीवन ही समाप्त हो जायेगा। कुमारिल भट्ट को उनकी योजना का पता चल जाता है। योजना के अनुसार जब छात्रों ने उसको छत पर ले जाकर धक्का दिया तो कुमारिल अपने मन में **"वेदाः प्रमाणं चेत्"** कहते हुए नीचे गिर गये। वेदाः प्रमाणम् चेत् का सम्पूर्ण निहितार्थ यह है कि यदि वेद सत्य हैं तो मेरी मृत्यु नहीं हो सकती मुझे चोट नहीं लग सकती। कहते हैं जब कुमारिल नीचे गिरे तो वे मरे नहीं न ही उन्हें बहुत चोट आयी केवल खरौंच मात्र ही आयी। खरौंच मात्र आने पर कुमारिल ने विचार किया कि वेद प्रमाण हैं, मैं वेद का पुजारी हूँ, मैं वेद पर आस्था रखनेवाला हूँ तो मुझे थोड़ी-सी भी चोट क्यों आयी? चिन्तन करते-करते उसको अन्तरात्मा से ही उत्तर मिला- तुमने **'वेदाः प्रमाणं चेत्'** कहकर वेदों के प्रामाण्य पर सन्देह व्यक्त किया था न, अर्थात् 'यदि' लगाया था, 'यदि' शब्द संशय प्रकट करता है। यदि तुम "वेदाः प्रमाणम्" कहकर अर्थात् वेदों के प्रामाण्य पर निस्सन्दिग्ध होकर छलाँग लगाते तो ये खरौंच भी नहीं आती। यहाँ इस घटना को प्रस्तुत करने का तात्पर्य यही है कि वेदों के प्रति ऋषि दयानन्द जैसे आस्थावान् प्राचीन काल में सभी थे। ऋषि दयानन्द ने तो मात्र हम भारतीयों को जागरूक किया है। कोई नवीन या अद्भुत बात हमारे सामने नहीं रखी। अस्तु।

19वीं सदी का काल भारत के इतिहास में पुनर्जागरण का काल कहा जाता है। इस समय ब्राह्म-समाज, थियोसोफिकल सोसायटी तथा आर्यसमाज सभी का अभ्युदय एक साथ हुआ। अमेरिका में स्थापित थियोसोफिकल सोसायटी के जन्मदाता कर्नल अल्काट तथा मैडम ब्लैवेट्सकी ऋषिवर के भव्य व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित थे। उन्होंने विचार किया कि ऋषिवर जैसा व्यक्तित्व हमारे संगठन को प्राप्त हो जायेगा तो इसका विस्तार शीघ्र ही पूरे भारत में हो जायेगा इसलिए चलो मिलकर उनसे अपने संगठन में सम्मिलित होने की प्रार्थना करते हैं। ऋषि दयानन्द के सामने ये लोग सहारनपुर में प्रस्ताव लेकर गये। वहाँ इन्होंने पहले तो ऋषि के सम्मुख ईश्वर तथा वेद की महत्ता को स्वीकार करते हुए थियोसोफिकल सोसायटी के

आर्यसमाज में विलय की घोषणा की। किन्तु कुछ अन्तराल के पश्चात् वेद तथा ईश्वर की सत्ता में इन्होंने विश्वास करना समाप्त कर दिया। फलतः स्वामीजी ने आर्यसमाज से थियोसोफिकल सोसायटी के सम्बन्ध-विच्छेद की घोषणा सितम्बर सन् 1880 में मेरठ में कर दी। इस प्रकार ये स्पष्ट है कि वेद के सम्बन्ध में ऋषिवर को कोई भी समझौता मान्य नहीं था। किन्तु आज बड़े दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि हमारे अन्दर समझौतेवाली प्रवृत्तियाँ बड़ी तीव्रता से आती जा रही हैं। **आर्यसमाज से इतर पठित वर्ग तो पूरी तरह दिग्भ्रान्त है ही, पर आर्यसमाजों में भी बहुत से लोग इस मनोवृत्ति से ग्रस्त दिखाई देते हैं। वे उदार बनने की होड़ में कुरान, गीता, बाइबिल, रामायण, वेद सबको एक ही तुला पर रखते हैं। किन्तु स्मरण रखें वेद की और अन्य ग्रन्थों की कोई तुलना ही नहीं, वेद सर्वोपरि हैं। आप गीता की कथा करिए-सुनिए कोई आपत्ति नहीं। आप राम-कथा करिए या सुनिए कोई। आपत्ति नहीं। आपत्ति है तो मात्र इतनी है कि जिस स्रोत से गीता जैसे अमर ग्रन्थ निकले हैं उस स्रोत को सर्वोपरि स्थान क्यों नहीं देते।** गीता के विषय में जो कहा गया है, उस पर ध्यान दें-

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सो सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्॥

अर्थात् सारी उपनिषदें गौएँ हैं, दुहनेवाले यशोदानन्दन कृष्ण हैं, पीनेवाला बछड़ा अर्जुन है और उपनिषदों से जो दूध दुहा गया उस दूध का नाम गीता है। कितनी सुन्दर कल्पना है। **यहाँ उपनिषदों को गीता का मूल बताया गया है। किन्तु उपनिषदें अपना मूल किसको बताती हैं इसे भी हमें जानना चाहिए। उपनिषदों में पदे-पदे वेदों की चर्चा आती है इससे सिद्ध होता है कि उपनिषदों का मूल वेद है। उपनिषदों में जिस अध्यात्म-विद्या का विस्तार किया गया है वह वेदों से लेकर ही किया गया है।**

विद्याएँ दो प्रकार की होती है। परा विद्या और अपरा विद्या। वेद परा विद्या के भी भण्डार हैं और अपरा विद्या के ही भण्डार हैं। परा अपरा का भेद इस प्रकार समझना चाहिए- "यया पृथिवी-तृणमारभय प्रकृतिपर्यन्तानां पदार्थानां ज्ञानेन यथावदुपकारग्रहणं क्रियते सा अपरोच्यते।" अर्थात् पृथिवी और तृण से लेकर प्रकृति पर्यन्त पदार्थों का ठीक-ठाक ज्ञान प्राप्त करानेवाली विद्या अपरा है। इसी प्रकार- **"अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते। अदृश्यादि-**

विशेषणयुक्तं सर्वशक्तिमद् ब्रह्म विज्ञायते।" जिसके द्वारा सर्वशक्तिमान परब्रह्म का यथावत् ज्ञान होता है वह परा विद्या कहाती है। वेद इन दोनों प्रकार की विधाओं के भण्डार हैं। उपनिषदों में जो परा विद्या का सागर लहराता हुआ दिखाई देता है वह वस्तुत: वेदों से ही लिया गया है इसलिए गीता, उपनिषद् के साथ-साथ यदि वेदों का भी अध्ययन किया जाये तो बहुत उत्तम होगा, किन्तु आज बड़े खेद की बात है कि गीता का अध्ययन करनेवाले वेद का अध्ययन नहीं करते, न करना चाहते हैं। वेदोद्धार करने का, वेद-सप्ताह करने का दायित्व केवल आर्यसमाज ही लेता है। आर्यसमाज के अतिरिक्ति आपको किसी भी स्थान पर वेद-कथाएँ की जाती हुई नहीं मिलेंगी। जबकि वास्तविकता यह है कि गीता के अट्ठारह अध्याय वेद के **"कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समा:। एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥"** इस मन्त्र को ही आधार बनाकर लिखे गये। आप जरा विचार करें- जब वेद के एक मन्त्र को लेकर सम्पूर्ण गीता गायी जा सकती है तो चारों वेद कितने रहस्यमय होंगे इसका अनुमान लगाना भी क्या हमारे लिये सम्भव है! इसलिए वेद को सर्वोपरि मानते हुए ही हें गीता-उपनिषद् आदि ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए ऐसा मेरा सभी गीता के पुजारियों से निवेदन है। भारत के प्रसिद्ध मनीषी डॉ० सम्पूर्णानन्दजी भी एक स्थान पर लिखते हैं-

"जिन अर्वाचीन पोथियों को हमने मूर्धन्य बना रखा है वह तो वेद के थोड़े से गिने चुने मन्त्रों पर ही न्यौछावन की जा सकती है। भगवद्गीता बड़ी ही उत्तम पुस्तक है पर यह यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के प्रारम्भिक दो मन्त्रों की व्याख्या के अतिरिक्त और क्या है।"

ध्यान रखें! समझौतावाद हमारे ह्रास का कारण है विकास का नहीं। ऋषि ने अपने सम्पूर्ण जीवन में असत्य से, अवैदिक सिद्धान्तों से समझौता नहीं किया, तो हम भी अपने सिद्धांतों पर स्थिर रहें, अस्थिरमति न बनें। इस प्रसंग में मुझे प्रसिद्ध कथाकार एवं उपन्यासकार मुंशी प्रेमचन्द का एक वाक्य याद आ रहा है। वे लिखते हैं, **"उदारता का अपर नाम ही सिद्धांत भ्रष्टता है।"** बात बिल्कुल सत्य है हम जितने ही उदार हो रहे हैं उतने ही सिद्धांत भ्रष्ट भी होते चले जा रहे हैं **अत: उदारता के नाम पर की जानेवाली सिद्धान्तभ्रष्टता से बचें। स्वाध्याय की परम्परा अपने परिवारों में अवश्य डालें। स्वाध्याय और योग व्यक्ति को बहुत ऊँचा उठा देते हैं- "स्वाध्याययोगसम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते।"**

यज्ञ में वेद मंत्रों से आहुति क्यों ? अन्य मनगढ़ंत मंत्र कहे जाने वाले अवैदिक वाक्यों से क्यों नहीं ?

- गंगा शरण आर्य , नई दिल्ली

हवन प्रक्रिया के साथ-साथ मंत्रों का उच्चारण क्यों किया जाता है इसका महर्षि दयानंद ने "सत्यार्थ प्रकाश" में उत्तर देते हुए लिखा है "मन्त्रों में वह व्याख्यान है कि जिससे होम करने के लाभ विदित हो जाए और मंत्रों की आवृति होने से कण्ठस्थ रहे, वेद-पुस्तकों का पठन-पाठन और रक्षा भी होवे" महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" के वेद विषय में यज्ञ के समय मंत्रोच्चारण के लाभ बताते हुए लिखा है "उनके पढ़ने से वेदों की रक्षा, ईश्वर कीस्तुति, प्रार्थना और उपासना होती है तथा होम से जो-जो फल होते हैं उनका स्मरण भी होता है। वेद मंत्रों के बारम्बार पाठ करने से वे कण्ठस्थ भी रहते हैं और ईश्वर का होना भी विदित होता है कि कोई नास्तिक ना हो जाए, क्योंकि ईश्वर की प्रार्थनापूर्वक ही सब कर्मों का आरम्भ होता है सो वेदमंत्रों के उच्चारण से यज्ञ में उसकी प्रार्थना सर्वत्र हो जाती है। इसलिए सब उत्तम कर्म वेदमंत्रों से ही करना उचित है।" आप किसी को प्रीतिभोज का निमंत्रण दें और उसका मधुर शब्दों से स्वागत करने के स्थान पर व्यंग्यपूर्ण कटु शब्दों से उसकी अवमानना करें तो उसके लिए सारे स्वादिष्ट व्यंजन व्यर्थ हो जाते हैं। इसके विपरीत यदि रूखा-सूखा भोजन भी प्रेमपूर्वक मधुर वार्तायुक्त सत्कार की भावना से अतिथि को परोसा जाए तो वह मुस्कान के साथ तो उस भोजन को स्वीकार करता ही है साथ ही साथ उस भोजन का गुणकारी पोषण भी उसे प्राप्त होता है। यज्ञ में भी देवताओं (पृथ्वी, जल, वायु, आकाश आदि) का प्रीतिभोज के समान ही आह्वान किया जाता है।

भूमि प्रदूषण, जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण तो कतिपय भौतिक क्रियाओं तथा यज्ञ की गैसीय प्रतिक्रियाओं से दूर हो जाते हैं, किन्तु ध्वनि-प्रदूषण सर्वाधिक सूक्ष्म प्रभावकारी होता है। विश्व में कहीं भी एक शब्द बोला जाता है तो वह सूक्ष्म विद्युत चुम्बकीय तरंगों में रूपान्तरित होकर सारे आकाश में फैल जाता है, तभी तो दूरदर्शन या आकाशवाणी से वही शब्द सारे विश्व में एक साथ एक ही समय में प्रसारित हो जाता है। पृथ्वी के शोर, चीख-पुकार, नारेबाजी, चीत्कार, ध्वनि विस्तारक यंत्रों से ध्वनि प्रदूषण आकाश में भर जाता है, इस आकाश-प्रदूषण का परिशमन किन शब्दों में संभव है? वेदमाता की वाणी से ही संभव है ऐसा क्यों? क्योंकि यज्ञ करते समय हम जो वेद मंत्रों का पाठ करते हैं उन मंत्रों की ध्वनि तरंगें हमारे शरीर, मस्तिष्क, मन और आत्मा पर विशेष प्रभाव डालती हैं साथ-साथ वातावरण में जाकर समस्त वातावरण की दूषित ध्वनियों को समाप्त करती हैं तथा मधुरता व सरसता का प्रसार करती हैं क्योंकि मंत्र एक प्रतिरोधात्मक शक्ति होती है एक मंत्र जाप एक

प्रकार की चिकित्सा पद्धति है। वर्तमान में यह शब्द ध्वनि का उपयोग आधुनिक चिकित्सा में नवीनतम पद्धति के रूप में किया जाने लगा है जिसे अल्ट्रोसोनिक वेव्स ट्रीटमेंट या शब्द ध्वनि तरंग उपचार कहते हैं। अल्ट्रासाउंड आदि यंत्रों द्वारा न केवल शरीर के आंतरिक अंगों की दशा का ज्ञान लिया जाता है अपितु प्रभावित अंगों पर मंत्र द्वारा शब्द तरंगों (स्वर लहरियों) या Sound waves के स्पर्श से उसकी पीड़ा आदि को दूर कर दिया जाता है।

Ultrasonic या Supersonic Waves treatment में यंत्र के माध्यम से Sound waves को केन्द्रित किया जाता है इन शब्द लहरियों में इतना बल होता है कि शब्द लहरियों को केन्द्रित करने वाले इन यंत्रों से जब पीड़ा वाले स्थानों को कई दिन तक 5-7 मिनट के लिए छुआ जाता है तब ये दर्द चले जाते हैं। किसी भी बड़े चिकित्सालय में जाकर इस बात का पता तथा अनुभव प्राप्त किया जा सकता है। वेद मंत्रों का उच्चारण क्या है? यह स्वर लहरियाँ Sound waves का ही तो वायुमंडल में प्रसारण हैं अगर यंत्र के द्वारा Ultrasonic waves से रोग दूर किया जा सकता है, तो वेदमंत्रों के एक खास प्रकार के उच्चारण से ऐसी लहरें उत्पन्न कर देना जिनसे रोग का निवारण हो, कोई आश्चर्य की बात नहीं कोई समय रहा होगा जब वेदपाठी इस विधि को जानते थे, परन्तु वेद मंत्रों द्वारा वायुमंडल को तथा मानव को प्रभावित कर देना आजकल के Ultrasonic waves द्वारा उपचार के ही समान हैं। मंत्र साधनाके सहारे प्रतिकूल प्रकम्पनों से बचा जा सकता है। जिस तरह रसायन शास्त्री यह जानता है कि किन-किन रसायनों के मेल से क्या नवीन व विशिष्ट रसायन बनता है वैसे ही ध्वनि वैज्ञानिक को यह भास होता है कि किन-किन शब्दों के संयोजन से किस-किस तरह की तरंगें पैदा होती हैं। वे पर्यावरण में व्याप्त परमाणुओं को कैसे प्रकम्पित करती है और उसकी परिणति किस प्रकार होगी। आज से लाखों वर्ष पूर्व वैदिक ऋषियों ने भी इसी विज्ञान के आधार पर मंत्रों की संयोजना की थी जिसे आधुनिक काल का वैज्ञानिक प्रमाणिक मानता है। मंत्र ध्वनि के विशिष्ट समूह होते हैं। लगातार वही मंत्र उच्चारण करते रहने से वातावरण में उन ध्वनि तरंगों का विशेष प्रभाव उत्पन्न हो जाता है। यही मंत्रों का परिणाम है।

जब शब्दों का उच्चारण होता है तब उनसे आकाश में कंपन उत्पन्न होता है। कंपन समस्त लोक परिक्रमा कर लेती है और अनुकूल तरंगों को पाकर उससे मिल जाती है उसके संयुक्त प्रभाव से साधक की इच्छा को मूर्तरूप मिल जाता है । यज्ञ में वेद मंत्रों के उच्चारण का प्रयोजन भी तो उनके विशिष्ट छन्द स्वर के नियत उच्चारण से ऐसी शब्द लहरें उत्पन्न कर देना है जिनसे न केवल आधि-व्याधियों का निवारण ही हो, प्रत्युत सम्पूर्ण आकाश ऐसे विषाणुओं से मुक्त होकर स्वच्छ व हितकारी बना रहे। यज्ञ कुण्ड में डाली गई श्रद्धापूर्वक सामग्री जब अग्नि में जाकर सूक्ष्म रूप धारण करती है तब वह वैदिक मंत्रों की ध्वनि से मिलकर वातावरण में व्याप्त हो जाती हैं इसकी

सूक्ष्म विद्युतीय तरंगें एक ओर वातावरण का परिशोधन करती है वहीं दूसरी ओर मानवीय मन में संव्याप्त ईर्ष्या, द्वेष, कुटिलता, पाप अनीति, अत्याचार, वासना, तृष्णा आदि मानसिक विकारों क्लेशों को दूर करती है। आत्मा को शुद्ध कर बलवान बनाती है। परमात्मा के सामीप्य का आनंद प्राप्त कराती है।

मंत्रों का वैज्ञानिक आधार प्रसिद्ध डॉ. आर. बी. धवन के अनुसार यह सच है कि मंत्रोच्चारण से हमारे मन और दिमाग को अपार शक्ति मिलती है भौतिकी के सिद्धान्तों के आधार पर इसे दो रूपों में अध्ययन किया जा सकता है शब्दों की ध्वनि व आंतरिक विद्युत धारा। अध्यात्म और ज्योतिष विज्ञान के विद्यानों के अनुसार आधुनिक विज्ञान की परिभाषिक शब्दावली में इसे अल्फा तरंग कहा जा सकता है। कहते हैं कि मंत्रोच्चारण से आंतरिक विद्युत धारा प्रवाहित होती है। दरअसल, शब्दों की ध्वनि विद्युत धारा प्रवाहित करती है। जब किसी मंत्र का उच्चारण किया जाता है तो ध्वनि उत्पन्न होती है, जिससे कम्पन होता है। यह ध्वनि कम्पन के कारण तरंगों में परिवर्तित होकर वातावरण में व्याप्त हो जाती है। इसके साथ ही आंतरिक विद्युत भी (तरंगों में) इसमें व्याप्त अथवा निहित रहती है यह शब्द की लहरों को व्यक्ति विशेष और दिशा विशेष की ओर भेजती है। यह इच्छित कार्य को पूर्ण करने में सहायता ती है अब प्रश्न उठता है कि यह आंतरिक वद्युत किस प्रकार जनरेट होती है? कई अनुसंधानों से यह बात सामने आई है कि ध्यान, मनन, चिन्तन आदि की अवस्था में रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप शरीर में विद्युत जैसी एक धारा प्रवाहित होती है (इसे हम शारीरिक विद्यत कह सकते हैं) और मस्तिष्क से विशेष प्रकार का विकिरण उत्पन्न होता है जिसका नाम अल्फा तरंग (इसे हम मानसिक विद्युत कह सकते हैं) रखा गया है। यही अल्फा तरंग मंत्रों के उच्चारण करने पर निकलने वाली ध्वनि के साथ गमन कर दूसरे व्यक्ति को प्रभावित करती है या इच्छित कार्य करने में सहायक होती है। जिस उद्देश्य से मंत्र जपा जा रहा है उसमें सफलता दिलाने में यह सहायक सिद्ध होती है इस अल्फा तरंग को ज्ञान धारा भी कह सकते हैं।

(दैनिक जागरण 3 नवम्बर 2009)

दिल्ली के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. डब्ल्यू. सेल्वामूर्ति ने अपने शोधपत्र ''फिजियोलॉजिकल इफेक्ट्स ऑफ मंत्राज ऑन माइण्ड एण्ड बॉडी'' में लिखा है कि अग्निहोत्र (यज्ञ) के मंत्रों का मनुष्य की फिजियोलॉजी तथा नर्वस सिस्टम तंत्रिका तंत्र पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। इसे उन्होंने न्यूरोफिजियोलॉजिकल प्रभाव की संज्ञा दी है। उन्होंने कहा कि अग्निहोत्र करने से शरीर का तापमान सामान्य से एक डिग्री सेंटीग्रेट कम हो जाता है, इससे मानसिक शान्ति मिलती है, तनाव दूर होता है और मस्तिष्क विश्रान्ति की अवस्था में पहुँच जाता है जिसे विज्ञानवेत्ता ''अल्फा स्टेट'' के नाम से संबोधित करते हैं।

यज्ञ से अल्फा तरंगों में बीस प्रतिशत तक की वृद्धि देखी गयी है। इस प्रयोग-परीक्षण के लिए आठ स्वस्थ व्यक्तियों का चयन किया गया और उन पर दो दिन अग्निहोत्र का प्रयोग किया गया। प्रथम दिन बिना मंत्र के तथा दूसरे दिन सस्वर मंत्रोच्चार के साथ यज्ञ सम्पन्न किया गया। इस बीच आठों व्यक्तियों के विभिन्न कार्यकीय परिवर्तनों जैसे-हृदयागति, ई.ई.जी., रक्तचाप, जी.एस.आर. आदि का संबंधित अत्याधुनिक मशीनों उपकरणों से जांच-पड़ताल व प्रमाणन किया गया। इन परीक्षणों में पाया गया कि यज्ञीय वातावरण सूक्ष्मीकृत एवं वायुभूत वनौषधियों एवं मंत्रोच्चारण के प्रभाव से हृदयगति शान्त हो गई। शरीर का तापमान एक डिग्री सेंटीग्रेट कम हो गया। जी.एस.आर. भी उस समय बढ़ा हुआ पाया गया। ई.सी.जी. में भी परिवर्तन मापा गया ''डेल्टा'' मस्तिष्कीय तरंगों मे कमी तथा ''अल्फा स्टेट'' के कारण विशेष रूप से पाये गये।

यज्ञ की प्रभावी क्षमता का प्रमुख कारण यह कि यज्ञाग्नि में मंत्रोच्चारण के साथ जो द्रव्य पदार्थ, वनौषधियाँ आदि आहुति के रूप में डाली जाती है वे सूक्ष्मीकृत होकर लयबद्ध मंत्रोच्चार से उत्पन्न उच्च आवृति की ध्वनि तरंगों के साथ मिल जाती हैं इस प्रकार उत्पन्न उच्चस्तरीय संयुक्त ऊर्जा तरंगों का स्थायी व दीर्घकालिक प्रभाव बना रहता है। अमेरिकी वैज्ञानिक डॉ. हार्वर्ड सितगुल ने अपने अनुसंधान निष्कर्ष में बताया है कि अकेले ''गायत्री महामंत्र'' में ही इतनी प्रचण्ड सामर्थ्य है कि उसके सस्वर उच्चारण से मानसिक विक्षोभों-दुर्भावनाओं का शमन किया जा सकता है। उन्होंने गायत्री महामंत्र के सस्वर उच्चारण के एक सेकंड में एक लाख तरंगें उत्पन्न होने का मापन करके यह रहस्योद्घाटन किया है। नवभारत टाइम्स समाचार पत्र सितम्बर 2007 के अंकों में तीन लेख छपे थे-1. चीन के एक किसान ने अपनी पैदावार बस्टिंग (तनाव मुक्ति) । इससे आपका जिन्दगी को देखने का तरीका बदल जाता है। तनाव दूर हो जाता है। 3. कनाडा के शोधकर्ताओं के अनुसार म्यूजिकल से याददाश्त, सीखने की क्षमता तथा आई क्यू बढ़ जाते हैं उपर्युक्त तीनों समाचारों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि संगीत का हमारे शरीर तथा मन पर कितना प्रभाव पड़ता है यज्ञ करते समय वैदिक मंत्रों का सस्वर पाठ हमारे मन मस्तिष्क को विशेष शान्ति प्रदान करता है।

हवन कुण्ड के चारों ओर बैठे याज्ञिक गण जब वेद पाठ करते हैं तो उससे स्वत: ही एक प्रकार का प्राणायाम होने लगता है। परिणामस्वरूप असीम सौरभ युक्त प्राणपद वायु पेद-पाठियों के फेफड़ों में भर जाती है और उन्हें निरोगी बना देती है। यज्ञ के भौतिक लाभ के साथ-साथ आध्यात्मिक लाभ भी होते हैं। यज्ञ में जो आहुति डाली जाती है उसके दो भाग हो जाते हैं। एक स्थूल भाग जो सूर्य आदि को प्राप्त हो जाता है, दूसरा भाग संस्कार रूप में हमारे चित्त पर पड़े हुए, सोए हुए सुसंस्कारों को

छिन्न-भिन्न करता है यज्ञ का यह सूक्ष्म भाग हमारे सूक्ष्म शरीर को पवित्र करता है हवन की वैज्ञानिकता यह है कि इसका स्थूल भाग भौतिक शुद्धि करता है तथा सूक्ष्म भाग आध्यात्मिक शुद्धि, आत्मिक शुद्धि, श्रद्धा-भक्ति और तन्मयता से दी हुई आहुतियाँ सबके हृदय मंदिर में चुपचाप प्रवेश करती जाती है और हृदय के कलुषित विचारों की सफाई करती जाती है और उसके स्थान पर पुनीत भावनाओं का अभ्युदय व नि:श्रेयस की सिद्धि होती है। यज्ञ करते समय मंत्रों का जाप हमें अनेक शारीरिक व मानसिक लाभ पहुँचाता है इन मंत्रों में सबसे प्रमुख शब्द 'ओ३म्' है जो कि ईश्वर का निज नाम है उसके बारम्बार उच्चारण करने से अनेक मानसिक व्याधियाँ शान्त हो जाती हैं तदन्तर गायत्री मंत्र मुख्य मंत्र माना जाता है। स्वामी संकल्पानन्द जी ने अपनी पुस्तक ''गायत्री महिमा'' में लिखा है। इसके जाप से हमारे शरीर में विद्यमान दस प्राणों की रक्षा होती है इसमें स्तुति प्रार्थना, तथा उपासना तीनों सम्मिलित हैं इसके उच्चारण से कु-विचारों से बचा जा सकता है इससे बुद्धि तत्व तीव्र व तीक्ष्ण होने लगता है इस प्रकार अग्निहोत्र में प्रयुक्त अन्य सैकड़ों मंत्र भी इसी प्रकार लाभकारी हैं।

''मंत्र'' शोधक संयंत्र की तरह काम करता है जैसे झाड़ू, कमरे में स्थित कचरे को साफ [illegible] है वैसे ही मंत्र हमारे अन्त:करण में स्थित [illegible]धक तत्वों का दूर करने में मदद करता है। मंत्र की पुनरावृत्ति से अन्त:करण या चेतना में हलचल उत्पन्न होती है। यह हलचल कुसंस्कारों और सुसंस्कारों में परस्पर टकराव उत्पन्न करती है और जैसे-जैसे जाप क्रिया बढ़ती जाती है वैसे-वैसे व्यक्ति में कुसंस्कारों एवं असद्वृत्तियों का पराभव होने लगता है अर्थात् चित्त से पड़े कुत्सित संस्कार भविष्य में उसे क्रियाशील करने में अक्षम होते जाते हैं क्रियान्वयन के समय हमेशा सद्विचारों की विजय होती है। यही कारण है कि हमारे वैदिक धर्म में गर्भाधान से लेकर अन्तेष्टि पर्यन्त 16 संस्कारों का महत्व है जिनके करने से हमारे पुराने कुसंस्कार हमें वैसे कार्य करने में प्रेरित नहीं कर पाते क्योंकि नए श्रेष्ठ संस्कार हमारे अन्दर, हमारे सूक्ष्म शरीर में समाहित होते रहते हैं। ये हैं मंत्र जाप के लाभ। जब हम यज्ञ करते हैं तो मंत्रोच्चारण करते हैं अत: समस्त लाभ यज्ञ में बोले जाने वाले वेद के पवित्र मंत्रों द्वारा ही होते हैं अन्य अवैदिक वाक्यों से नहीं क्योंकि अन्य के पाठ में यह प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता। ईश्वर के वचन से जो सत्य प्रयोजन सिद्ध होता है, सो अन्यों से कभी नहीं हो सकता। क्योंकि जैसा ईश्वर का वचन सर्वथा भ्रान्ति रहित सत्य होता है वैसा अन्य का नहीं सो यज्ञ में वेदमंत्रों के उच्चारण से जहाँ शारीरिक लाभ मिलते हैं वही अनगिनत मानसिक लाभ भी हमें अनायास ही प्राप्त होते रहते हैं-

1. वेद पाठ को संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा मान्यता : संयुक्त राष्ट्रसंघ के शिक्षा एवं सांस्कृतिक संगठन (UNSESCO) द्वारा वेद

पाठ को अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्रदान करते हुए मानव सभ्यता की अलौकिक विरासत घोषित किया गया।

2. वेद पाठ हृदय के लिए शक्तिदायक : यूनेस्को द्वारा 7 नवम्बर 2003 को पेरिस में गीत-संगीत की एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता आयोजित की गई। उसमें वेद पाठ की उपयोगिता को हृदय की शान्ति-सांत्वना के लिए सर्वोच्च प्रथम स्थान ठहराया गया है।

3. मंत्रों की ध्वनि-तरंगें रोग उपचार में सहायक मंत्रों की ध्वनि तरंगें (Soound Waves) शरीर व मन पर शक्तिशाली प्रभाव डालती है। ये तरंगें रोगों के उपचार में उसी प्रकार सहायता करती हैं, जिस प्रकार फिजियोथेरेपी (Physiotherapy) में अल्ट्रासोनिक या सुपरसानिक (Ultrasonic or Supersonic) ध्वनि तरंगों द्वारा शरीर दर्द वाले स्थानों का दर्द दूर किया जाता है।

4. भारत के राष्ट्रपति के द्वारा वेद मंत्रों के व्यापक प्रभाव की चर्चा : वेदमंत्रों के उच्चारण से उत्पन्न स्वर लहरियों द्वारा शरीर के विभिन्न अवयवों पर पड़ने वाले व्यापक लाभकारी प्रभाव के विषय में भारत के राष्ट्रपति महामहिम श्री ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने हरिद्वार में उत्तरांचल संस्कृत अकादमी द्वारा आयोजित समारोह में कहा वेद मंत्रों का मानव मस्तिष्क पर व्यापक प्रभाव पड़ता है और इससे मस्तिष्क तरोताजा रहता है। राष्ट्रपति महोदय ने वहाँ वेद मंत्रों की सी.डी. भी मंच से चलवाकर सारे जनसमूह को वेदमंत्रों को सुनने की प्रेरणा दी तथा स्वयं भी खड़े होकर वैदिक मंत्र-पाठ सुनते रहे। (आर्य जगत 14.11.2004)

5. डिवाइन लाइफ सोसायटी ऋषिकेश के प्रसिद्ध योगी रिसर्च स्कॉलर स्वामी शिवानन्द के अनुसार-Chanting of Mantras destroys the microbes and vivifies the cells and tissues. They are best, most potent anticeptics and germicides. They are more potent than ultra-violet rays or Rontgen rays." अर्थात् वे मंत्रों का गायन-रोगाणुओं को नष्ट कर देता है और कोशिकाओं व ऊतकों को अनुप्राणित करता है उनमें नव-जीवन का संचार करता है। वेद मंत्र सर्वोत्तम, सर्वाधिक शक्तिशाली रोगाणुरोधक और रोगाणुनाशक हैं (रोगों के कीटाणुओं को रोकने और उन्हें मिटाने वाले हैं) वेद मंत्रों का गायन पराबैंगनी व अल्ट्रावायलेट किरणों से भी अधिक ताकत रखता है।

अत: पाठकों से मेरा निवेदन है कि कभी भी अपने घरों में यज्ञ, ईश्वरीय वाणी सत्यसनातन वेद के पवित्र मंत्रों से ही करें व कराएँ तथा अवैदिक वाक्यों को वेदमंत्रों की संज्ञा देकर यज्ञ अनुष्ठान कराने वाले धनलोलुप पेटार्थी ब्राह्मणों से बचें। ●

वेद परमात्मा का दिया हुआ सृष्टि का प्रथम पवित्र ज्ञान है, जो पूर्ण है सबके लिए है, सदा के लिए है। वही सनातन और धर्म का आधार है।

नीति नवनीति

आचार्य हरिदेव

1. **वृद्ध चार प्रकार के होते हैं**- धन वृद्ध, आयु वृद्ध, सदाचार वृद्ध, ज्ञान वृद्ध।
2. **तीन दुर्लभ वस्तुएँ**- (1) मानव जन्म (2) आर्य देश में जन्म (3) श्रेष्ठ कुल में जन्म, ये तीन बातें देवता भी जानते हैं।
3. **इन चार के न करने से पश्चातापः**- (1) ज्ञान का अभ्यास न करने से, (2) भोगों से आसक्त रहने से, (3) चरित्र के नाश से, (4) अभिमान के कारण दूसरों का तिरस्कार करने से, देवता भी पश्चाताप करते हैं।
4. **हितकर नहीं**- रोना-धोना, चीखना-चिल्लाना, कलपते रहना और किसी का बुरा चिन्तन करना, किसी के लिए हितकर नहीं।
5. **शिक्षा के अपात्र**- उद्यण्ड, चटोरा, अत्यन्त क्रोधी ये तीन शिक्षा के अधिकारी नहीं।
6. **तीन को समझाना कठिन है**- मूर्ख, सत्य के द्वेषी और कुगुरुओं के बहकाये अन्ध विश्वासी को समझाना कठिन है।
7. **तीन काम उत्तम हैं**- शरीर से दूसरों की सहायता करना, मीठे वचन से दूसरों को सुखी करना, मन से दूसरों का हित चिन्तन ये तीन काम उत्तम है।
8. **तीन से सुख होता है**- विचार कर काम करने से, विचार कर बोलने से, सदा संतोष से, सुख मिलता है।
9. **तीन कार्यों में मर्यादा रखो**- खाने-पीने में, सोने बैठने में, दूसरों से मिलने जुलने में मर्यादा रखो।
10. **मानवता के पाँच काम**- अज्ञानी को ज्ञान देना, भूखे प्यासे को अन्न जल देना, भूले का मार्ग बतलाना, दूसरे पर दया करना, गिरों को ऊँचा उठाना सच्ची मानवता है।
11. **विवेक का मूल वेद**- सुख का मूल धर्म है, धर्म का मूल दया है, दया का मूल विवेक है, विवेक का मूल वेद है।
12. **तीन कठिन कार्य**- दरिद्रता में दान, तरुणावस्था में इन्द्रिय दमन, समर्थ होते हुए क्रोध शमन, ये तीन बातें कठिन हैं।
13. **किन का उपवास नहीं करना चाहिए**- गर्भवती स्त्री को, दूध पीते बच्चे को, दुर्बल अजीर्ण रोगी को, उपवास नहीं करना चाहिए।

14. **चार कामों से मान प्राप्ति**– मान देने से मान मिलता है, नम्र स्वभाव से मान मिलता है और गुण विशेष से मान मिलता है।

15. **चार करने योग्य कार्य**– ब्रह्मचर्य का पालन, शास्त्र का पठन, आत्म स्वरूप का चिन्तन, इन्द्रियों का दमन अवश्य करो।

16. **तीन बड़े तप**– हितकारी, परिमित, मधुर वचनों का बोलना, दीन-दुखियों की सेवा, अपनी भूलों को स्वीकार करना ये तीन बड़े तप हैं।

17. **उपवास में ज्याज्य कर्म**– उपवास में क्रोध, अहंकार, निन्दा, गरिष्ठ भोजन, अधिक भोजन और चटपटा सुस्वादु भोजन नहीं करना चाहिए।

18. **वास्तविक सच**– हाथ का सच्चा जवान का सच्चा, लंगोट का सच्चा, व्यवहार का सच्चा ही वास्तव में सच्चा है।

19. **पर-देश में तीन त्याज्य कर्म**– आलस्य को, आराम को, गुस्से को परदेश में छोड़ देवें।

20. **मित्रता का स्थायित्त्व**– मित्र को दे, और मित्र से ले, मित्र को सुने और मित्र को सुनावे, मित्र के यहाँ खावे और मित्र को खिलावे, मित्र को धोखा न दे, मित्र का अपमान न करे। मित्र से छलकपट न करे, मुसीबत में मदद करे, मित्र के गुणों का वर्णन करे और उसके दुर्गुणों को ढांपे, इससे मित्रता स्थायी होती है।

21. **चार प्रकार के चाण्डाल**– ऋण लेकर न लौटाने वाले, गुणी जनों को दोष लगाने वाले, माता-पिता की सेवा न करने वाले और बिना बात क्रोध करने वाले चाण्डाल होते हैं।

22. **सच्चे ब्राह्मण के लक्षण**– स्वाध्याय में रत रहने वाले, गुणी जनों से प्रेम रखनेवाले, पापी से नहीं, पाप से घृणा करने वाले, सदा धर्म में रहने वाले, किसी वस्तु में आसक्ति न करने वाले, जीवन मरण में समभाव रखनेवाले सच्चे ब्राह्मण हैं।

23. **बुद्ध की तीन शिक्षाएँ**– पाप से बचना, पुण्यों का संचय करना, अपना चित्त शुद्ध रखना ये तीन बुद्ध की शिक्षाएं हैं।

24. **मानव उन्नति के सात साधन**– व्यर्थ की बकवाद न करना, दुष्टों की संगति न करना, दूसरों के दोष न देखना, सदा प्रसन्न रखना, किसी से वैर न करना, क्षमाशील होना और निर्भय रहना इन सातों से मानव उन्नति लाभ करता है।

25. **चार रोग**– इच्छा, क्षुधा, बुढ़ापा, चिन्ताएं ये चार रोग हैं।

26. **देवों के गुण**- सत्य बोलने वाले, क्रोध न करने वाले, याचक को यथेच्छ दान देने वाले, निर्धनता से स्नेह रखने वाले, हानि-लाभ से सम रहने वाले मनुष्य देव कहलाते हैं।

27. **तीन प्रकार के अन्धे**- कामी, क्रोधी, अहंकारी तीन प्रकार के अन्धे होते हैं।

28. **न भूलनेयोग्य तीन काम**- प्रतिज्ञा करके पूरा करना, कर्ज लेकर वापस करना, भरोसा देकर काम करना, कभी न भूलिये।

29. **तीन काम विरले जन करते हैं**- दूसरों को विश्वास देकर काम करने वाले, काम करके अहंकार न करने वाले, दूसरों की सफलता को देखकर प्रसन्न होने वाले विरले होते है।

30. **चार का त्याज्य उत्तम है**- दयाहीन धर्म, ज्ञानहीन गुरु, स्नेह हीन बन्धु, लज्जा हीन स्त्री ये चारों सदा त्याज्य हैं।

31. **उच्चपद के अधिकारी**- अपनी आत्मा का दमन करने वाले, दूसरों की आत्मा को पहचानने वाले, भगवान का भजन करने वाले, दान दे के दुःखी न होने वाले उच्च पद को पाते है।

32. **यश के पात्र होते हैं, निन्दित नहीं**- व्यर्थ व्यय न करने वाले, सादा रहन-सहन रखने वाले, पापाचार से दूर रहने वाले, कुसंगति न करने वाले, सबसे प्रेम करने वाले, न्याय से धन कमाने वाले कभी दुखी व निन्दित नहीं होते।

33. **त्याज्य कर्म**- पराई निन्दा, अपनी बड़ाई, धन पाकर गर्व, वस्तु नष्ट होने पर शोक, पराये धन की इच्छा कभी न करो।

34. **तीन की सेवा में संकोच न करो**- अपने मित्र, अपने स्त्री, द्वार पर आये अतिथि की सेवा में संकोच मत करो।

35. **तीन से सदा स्नेह करो**- दीन दुखियों से, अपने अधीन काम करने वाले कर्मचारियों से, अपनी धर्मपत्नी से सदा स्नेह का व्यवहार करो।

36. **चार प्रकार का धर्म**- श्रेष्ठ श्रवण, श्रेष्ठ अध्ययन, श्रेष्ठ चिन्तन, श्रेष्ठ आचरण ये चार प्रकार का धर्म है।

37. **अपितु ग्रहण करने योग्य गुण-न ग्रहण करने योग्य गुण**- कृतघ्न, कपटी, अभिमानी अपितु ग्रहण करने योग्य गुण नम्र, सरल, सुशील बनो।

38. **भूलने योग्य तीन बातें**- अपना किया उपकार, दूसरों द्वारा किया अपकार, धन, विद्या आदि के कारण प्राप्त सत्कार तीन बातें भूल जाओ।

39. **तीन स्मरणीय बातें**- अपने द्वारा की हुई दूसरों की बुराई, दूसरों द्वारा की हुई अपनी भलाई, न्याय के द्वारा की गई कमाई तीन बातें याद रखो।

40. **अविश्वसनीय-विश्वसनीय**- दुर्जन पर, दुराचार पर, असत्य व्यवहार पर विश्वास न करो, शुद्धाचरण पर, आत्मा को शक्ति पर और भगवान की भक्ति पर विश्वास करो।

41. **नित्य करने योग्य तीन काम**- श्रेष्ठ ग्रन्थों का अध्ययन, ईश्वर का ध्यान, निज दोषों का चिन्तन नित्य करो।

42. **तीन कार्यों से बड़प्पन मिलता है**- अपनी प्रशंसा आप न करना, दूसरों की निन्दा करने से, दु:खी को देखकर न हँसने से बड़प्पन मिलता है।

43. **घृणा करने योग्य**- पाप से, अभिमानसे, मन की मलिनता से घृणा करो। रोगी से, नीच जाति वाले से घृणा कभी न करो अर्थात् प्रेम करो।

44. **उन्नति तीन प्रकार से**- बुरा काम न करने से, निन्दा चुगली में न पड़ने से, कष्टों से साहस रखने से मनुष्य का मस्तक ऊँचा रहता है।

45. **जाने योग्य एवं न जाने योग्य स्थान**- सन्तों की सभा में, रोगी की सेवा में अवश्य जाओ। वेश्या, जुआरी और दलाल के घर कभी न जाओ।

46. **तीन का मान करो, तीन से दूर रहो**- बूढ़ों का विद्वानों का, निर्धनों का सदा मान करो तथा जुआरी, शराबी और व्यभिचारी से दूर रहो।

47. **तीन का त्याग करो**- पराई निन्दा, पराई स्त्री और पराई सम्पत्ति, इन तीन का त्याग करो।

48. **मनुष्य की पहचान**- संकट में घबराये नहीं, याचक को 'न' न करे, दुखी से कड़वा न बोले वही वास्तव में मनुष्य है।

49. **तीन से दूर रहो**- धर्म-कर्म न करने वाले, देश-द्रोही तथा सन्त विरोधी, सत्पुरुष निन्दक से दूर रहो।

50. **तीन बातों का चिन्तन करो**- महापुरुषों का प्रेम कैसे प्राप्त हो, दुखियों का दुख कैसे दूर हो, हृदय से पाप कैसे शून्य हो, तीनों बातों को सदा सोचो। ●

अच्छे पौधे तो पनपते हैं
पानी देने पर।
झाड़-झंखाड़ अपने-आप
बढते जाते हैं।।

सत्यार्थ प्रकाश का संदेश

–आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री
वेद प्रवक्ता, सम्पादक–अध्यात्म पथ

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ लिखकर वैचारिक क्रान्ति की और भ्रान्तियों का निवारण किया। शास्त्र के तूणीर से उन्होंने तर्क का तीर निकाला, ये उनका शस्त्र था जिसने युगों से भारत के क्षितिज को आच्छादित करने वाले अज्ञानरूपी भस्मासुर का वध किया। दयानन्द व्यक्ति नहीं, अग्निपुंज था, जिधर जाता दिशाएं आलोकित हो उठती थी, जहाँ गिरता कुरीतियों पर गाज बनकर और पीड़ितों के लिए दया का भाव लेकर, आनन्द का अमृत उन्हें देने वाला दयानन्द उनसे मिलता प्रसन्नता और उल्लास का नया साज बनकर।

दयानन्द के शब्दशास्त्र में भय और प्रलोभन का स्थान नहीं। भय उन्हें आतंकित नहीं कर सका और प्रलोभन उसे खरीद नहीं सका।

दयानन्द की विद्याग्रहण की क्षमता कितनी विलक्षण थी इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि अपने महान गुरु के चरणों में मात्र 3 वर्ष बैठकर उन्होंने इतना कुछ प्राप्त किया जिसको ग्रन्थरूप में मात्र साढ़े तीन महीने में उन्होंने संजोकर रख दिया, उस ग्रन्थ का नाम सत्यार्थ प्रकाश है। इसकी महत्ता तब समझ में आ सकती है जब हम यह भी ध्यान में रखें दयानन्द अन्य कल्याणकारी गतिविधियों में भी व्यस्त थे। साढ़े तीन महीने में लिखे गये ग्रन्थ में वह हमें पढ़ने को मिलता है जिसने तीन शताब्दियों का इतिहास बदल कर रख दिया।

यह कार्य केवल दयानन्द जैसा आदित्य ब्रह्मचारी ही कर सकता था। सत्यार्थ प्रकाश में 377 ग्रन्थों का उल्लेख है तथा 1542 वेद मन्त्रों एवं श्लोकों के उद्धरण हैं। चारों वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, षड्दर्शन, 18 स्मृति, सूत्रग्रन्थ, जैन बौद्ध ग्रन्थ, बाइबिल, कुरान इन सबके उद्धरण ही नहीं उनकी सन्दर्भ सूची भी दी गयी है। किस ग्रन्थ में कौन सा मंत्र या श्लोक है, वाक्य कहाँ है, उसकी संख्या क्या है यह सब कुछ इस साढ़े तीन महीनों में लिखे ग्रन्थ में मिलता है।

आज स्थिति ये है कि एक अनुसन्धानकर्त्ता जिसे सभी संदर्भ ग्रन्थ उपलब्ध हों और अनुकूल सामग्री की सुविधा भी प्राप्त हो तो उस अनुसन्धानकर्त्ता को भी ऐसा ग्रन्थ लिखने में वर्षों लगेंगे। और तब भी यह सुनिश्चित नही किया जा सकता कि विषय का प्रतिपादन इतना निर्भान्त और शंकाओं का समाधान ऐसा होगा कि संदेह को कोई प्रश्रय न हो।

कार्ल मार्क्स ने 34 वर्ष इंगलैंड में बैठकर दास कैपिटल ग्रन्थ लिखा जिसने विश्व में नवीन आर्थिक दृष्टिकोण को जन्म दिया किन्तु महर्षि दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' साढ़े तीन महीनों में लिखा था, जिसने नवीन सामाजिक दृष्टिकोण को जन्म दिया।

ऋषि दयानन्द ने सर्वाधिक सशक्त विचार जो सत्यार्थ प्रकाश में दिया वो वर्ण व्यवस्था को कर्म के आधार पर प्रतिष्ठित करना। दयानन्द वास्तव में जो पतित और दलित थे उनकी उन्नति एवं उनका उद्धार चाहते थे।

आज के स्वार्थ परायण राजनीतिज्ञों की भाँति वह उन्हें सदा दलित रखकर उनका शोषण नहीं करते थे। वे चाहते थे कि दलित रहते हुए एक अधिकार मांगने वालों एक वर्ग खड़ा होकर हमारे गले न पड़ा रहे। दयानन्द की आंखें वह दिन देखने को तरसती थीं जब उनके युग का दलित उन्नति कर हमारे समकक्ष खड़ा हो, गिड़गिड़ाते हुए हमारे पांव में न पड़े, वरन् हर्ष से गद्‌गद् हो हमारे गले मिले।

महर्षि दयानन्द की कालजयी कृति सत्यार्थ प्रकाश ने अनेक लोगों को जीवन दिया, दृष्टिहीनों को दृष्टि दी। और जीवन में पतझड़ का अनुभव करने वाले गरमी में झुलसते हुए लोगों को वासन्ती मधुरिमा की, भरपूर वृष्टि दी।

ग्रन्थ रचना का उद्देश्य

स्वयं ऋषि के शब्दों में–मेरा इस ग्रन्थ को बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य–सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादित करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है।

मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जाननेवाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़कर असत्य में झुक जाता है। परन्तु इस ग्रन्थ में ऐसी बात नहीं रखी गई और न किसी का मन दुःखाना और न किसी की हानि का तात्पर्य है किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति व उपकार हो.....क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं। सत्यार्थ प्रकाश दो भागों में विभक्त है, एक है पूर्वार्द्ध और एक उत्तरार्द्ध, पूर्वार्द्ध में दस और उत्तरारर्द्ध में चार समुल्लास हैं। इस प्रकार सत्यार्थ प्रकाश में चौदह समुल्लास हैं।

समुल्लास शब्द का प्रयोग एक महान प्रयोग है

समुल्लास शब्द का प्रयोग एक महान प्रयोग है जो दयानन्द की सर्वथा मौलिक विचारणा का द्योतक है। यदि कोई जुलाहा विद्वान बन जाये और पुस्तक लिखे तो वह जितना कुछ जान लेगा उसी में समझ लेगा कि पट खुल गए हैं और उसी पर वह डटकर रहेगा, हटकर आगे नहीं बढ़ेगा।

कुम्हार यदि विद्वान बन जाए तो वह अपने ग्रन्थ का प्रारम्भ प्रथमो घटः आदि शब्दों का प्रयोग करेगा।

लेकिन यश अपयश, मान–हानि के प्रति सर्वथा समभाव रखने वाला, समरस दयानन्द स्वयं उल्लसित रहते हुए लोगों को उल्लास देना चाहता है वह अपने इस महान ग्रन्थ का वर्गीकरण समुल्लास शीर्षक से करता है। ताकि दुनिया को लोग अच्छी तरह उल्लसित और प्रफुल्लित जीवन जीने वाले बने।

वैचारिक क्रान्ति का मूल स्रोत सत्यार्थ प्रकाश का प्रणयन ऋषि ने मुरादाबाद निवासी राजा जयकृष्णदास की सत्प्रेरणा पर किया। सत्यार्थ प्रकाश के 14 समुल्लासों के विषय इस प्रकार हैं :

प्रथम समुल्लास में ईश्वर के नाम व्युत्पत्तिपूर्वक गिनाये गये हैं।

द्वितीय समुल्लास में शिक्षा की अनिवार्यता एवं उसके स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है।

तृतीय समुल्लास में ब्रह्मचर्य, पठन-पाठन की व्यवस्था और सत्यासत्य के निर्णय के लिए ग्रन्थों की प्रामाणिकता एवं अप्रामाण्किता पर विशद विवेचन किया हैं

चतुर्थ समुल्लास में ऋषि ने विवाह और गृहस्थाश्रम पर विशद प्रकाश डाला है।

पंचम समुल्लास में उन्होंने वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम की विधि पर प्रकाश डाला है।

षष्ठ समुल्लास में आर्य शास्त्रों के आधार पर राजधर्म का वर्णन किया है।

सप्तम समुल्लास में वेद प्रतिपादित ईश्वर और वेद विषय का भी विस्तारपूर्वक वर्णन किया हैं

आठवें समुल्लास में जगत् की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय का उल्लेख किया गया है।

नवें समुल्लास में विद्या-अविद्या, बन्धन और मोक्ष की मौलिक व्याख्या की है।

दसवें समुल्लास में आचार-अनाचार, भक्ष्य और अभक्ष्य के विषय पर उन्होंने अपना मत व्यक्त किया है।

11, 12, 13, 14 समुल्लास में क्रमशः देश में प्रचलित मतमतान्तर, चारवाक बौद्ध और जैन, ईसाई और इस्लाम मत की समालोचना की है।

महर्षि का अनिवार्यवाद

1. आठ वर्ष के हों तभी लड़कों को लड़कों की और लड़कियों को लड़कियों की पाठशाला में भेज देवे।-स.प्र. 3-66, 4

- इसमें राजनियम और जाति नियम होना चाहिये कि पाँचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई भी अपने लड़के-लड़कियों को घर में रख सकें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें। जो न भेजे वह दण्डनीय हो। -स.प्र. 3-67, 11

3. राजा की आज्ञा से आठ वर्ष के पश्चात् लड़का व लड़की किसी के घर में रहने न पावें किन्तु आचार्य कुल में रहे। जब तक समावर्तन का समय न आवे, तब तक विवाह न होने पावे।
   -स.प्र. 3-129, 6
4. राजा को योग्य है कि सब कन्या और लड़कों को उक्त समय से उक्त समय तक ब्रह्मचर्य में रख के विद्वान कराना। जो कोई इस आज्ञा को न माने तो उसके माता-पिता को दण्ड देना।
   -स.प्र. 3-129, 4
5. उनके माता-पिता अपने सन्तानों से व सन्तान अपने माता-पिताओं से न मिल सकें और न किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार एक दूसरे से कर सकें, जिससे संसारी चिन्ता से रहित होकर केवल विद्या बढाने की चिन्ता रखें।
   -स.प्र. 3-67,3
6. सबको तुल्य वस्त्र, खान-पान आसन दिये जायें चाहे वह राजकुमार व राजकुमारी हों, चाहे दरिद्र के सन्तान हों सबको तपस्वी होना चाहिए। -स.प्र. 67, 1
7. जैसे पुरुषों को व्याकरण धर्म और अपने व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिये वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण वैद्यक, गणित शिल्पविद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिए। -स.प्र. 3-128, 6

8. जब गृहस्थी शिर के श्वेतकेश और त्वचा ढीली हो जाय और लड़के के लड़का भी हो गया हो तब वन में जाके बसे।

9. वानप्रस्थ–स्वाध्याय अर्थात् पढ़ने–पढ़ाने में नित्य–युक्त, जिवात्मा, सबका मित्र, इन्द्रियों का दमनशील, विद्यादि का दान देने हारा और सब पर दयालु, किसी से कुछ भी पदार्थ न लेवे, इस प्रकार सदा वर्तमान करे।

–स.प्र. 5–209, 19

10. (क) इसलिये श्रद्धापूर्वक ब्रह्मचर्य और गृहाश्रम का अनुष्ठान करके वानप्रस्थाश्रम अवश्य करना चाहिये ।–स.वि. 269–13

(ख) वहाँ जंगल में वेदादि शास्त्रों के पढ़ने–पढ़ाने में नित्ययुक्त। –स.वि. 272–6

(ग) जो जंगल में पढ़ाने और योगाभ्यास करने हारे तपस्वी धर्मात्मा विद्वान लोग रहते हैं।

–स.वि. 27–4

11. यह गुण कर्मों से वर्णों की व्यवस्था कन्याओं की सोलहवें वर्ष और पुरुषों की पच्चीसवें वर्ष की परीक्षा में नियत करनी चाहिये।

12. वेद पढ़ने–पढ़ाने सन्ध्योपासनादि पंचमहायज्ञों के करने और होम मन्त्रों में अनध्याय विषयक अनुरोध–आग्रह नहीं है क्योंकि नित्य कर्मों में अनध्याय नहीं होता, जैसे श्वास प्रश्वास सदा लिये जाते हैं, बन्ध नहीं किये जाते वैसे नित्यकर्म प्रतिदिन करना चाहिये न किसी दिन छोड़ना। –स.प्र. 3–85, 16

13. जो सब वर्णों में पूर्ण विद्वान् धार्मिक परोपकार प्रिय मनुष्य है उसी का ब्राह्मण नाम है... इसीलिये लोक श्रुति है कि ब्राह्मण को ही संन्यासी का अधिकार है अन्य को नहीं।

–स.प्र. 5–211, 18

14. यदि एक अकेला सब वेदों का जानने हारा द्विजों में उत्तम सन्यासी जिस धर्म की व्यवस्था करे वही श्रेष्ठ धर्म है क्योंकि अज्ञानियों सहस्रों, लाखों, करोड़ों मिलके जो कुछ व्यवस्था करें उसको कभी न मानना चाहिये।

–स.प्र. 6–228, 1

15. जो ब्रह्मचर्य सत्य भाषणादि व्रत वेद विद्या वा विचार से रहित जन्म मात्र से शूद्रवत् वर्तमान है उन सहस्रों मनुष्यों के मिलने से भी सभा नहीं कहाती। –स.प्र. 6–228, 1

भर्तृहरि शतक

अज्ञ: सुखमाराध्य: सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञ:।
ज्ञान लव दुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रंजयति।।

ना समझ और अज्ञानी, बुद्धिहीन को सरलतापूर्वक समझाया जा सकता है। समझदार को और भी सरलता से समझाया जा सकता है। परन्तु जिसमें बुद्धि का लवलेश भी नहीं है – उसे ब्रह्मा भी नहीं समझा सकता है।

"दिपावली के उपलक्ष में"

दिपावली है अन्धकार पर प्रकाश की विजय का त्यौहार ।
इसलिए छोड़ दो अन्धविश्वास, पाखण्ड, जिनका नहीं है कोई आधार ।।
दिपावली है अन्याय पर न्याय की विजय का त्योहार ।
मिटाते रहो अन्याय, स्थापित करो न्याय, यही है 'गीता' का सार ।।
दिपावली है अधर्म पर, धर्म की विजय का त्यौहार ।
अन्य मतों को छोड़ वैदिक धर्म अपनाओ, जो देता है आत्मा को आहार ।।
दिपावली है बेईमानी पर, ईमानदारी की विजय का त्यौहार ।
जीवन में यदि उन्नत होना चाहो तो करो सभी से ईमानदारी का व्यवहार ।।
दिपावली है कूड़ा-कर्कट पर, सफाई की विजय का त्यौहार ।
कूड़े-कर्कट से करो सदा नफरत और सफाई से करो हमेशा प्यार ।।
दिपावली है हँसो और हँसाओ और सब को प्रसन्न रखने का त्यौहार ।
सबसे रखो अच्छा व्यवहार, मत करो किसी भी प्राणी पर अत्याचार ।।
अधिकतर लोग समझते हैं, इसे रावण पर राम की विजय सा त्यौहार ।
जो भी हो, हमसे सीखें, कैसे आवें मेरे जीवन में 'राम' के संस्कार ।।
दिपावली का त्यौहार हमें सिखलाता है सबसे करना प्यार ।
न कभी किसी पर जुल्म करो, न करो किसी से गलत व्यवहार ।।
यदि करोगे हमेशा हर व्यक्ति से प्यार और रखोगे सबसे सद्व्यवहार ।
तभी हम कह सकेंगे, मनाया हमने सही अर्थों में दिपावली का त्यौहार ।।
दिपावली है बुराइयों को छोड़, अच्छाइयों को अपनाने का त्यौहार ।
कहता है "खुशहाल" इस सिद्धान्त को लो अपने जीवन में उतार ।

खुशहाल चन्द्र आर्य
C/o गोविन्दराम आर्य एण्ड सन्स
180 महात्मा गांधी रोड (दोतल्ला), कोलकाता-700007
Mob. 22183825, 64505013 (Off) (033)
26758903 (R), Mob. 9830135794

राजा सब दिशाओं को कल्याणकारी बनावे

–डॉ. अशोक आर्य, कोशाम्बी, गाजियाबाद

किसी भी देश का राजा प्रजा का सच्चा प्रतिनिधि होता हैं प्रजा का सच्चा प्रतिनिधि होने के कारण वह सदा प्रजा के कल्याण के कार्य करता है, वह सदा प्रजा के उत्थान के कार्य करता है, प्रजा की उन्नति के कार्य करता है, वह प्रजा को शिक्षित करने की कार्य करता है, वह प्रजा को खुशहाल बनाने के कार्य करता है। इस बात की चर्चा यजुर्वेद में बड़ी ही उत्तम ढंग से की गयी है। यथा :

शिवो भूत्वा मह्यमग्नेऽथो सीद शिवास्त्वम् ।
शिवाः कृत्वा दिशः सर्वाः स्वं योनिमिहासदः ॥

यजुर्वेद 12.17॥

मन्त्र के आलोक में परमपिता परमात्मा उपदेश करे हुए देश के राजा को कह रहे हैं कि हे राजन् ! तू अग्रणी है। राजा होने के कारण तू इस देश की जनता का नायक है। तू जनता को नेतृत्व देने वाला है। इसलिए राष्ट्र का नायक होने के नाते तू अपनी राष्ट्र वासिनी प्रजा के लिए तेरे राज्य में जो तेरी प्रजा निवास करती है, उस प्रजा के लिए कल्याणकारी बनकर इस देश के इस राष्ट्र के सिंहासन पर विराजमान हो।

इन पंक्तियों में मन्त्र ने दो उपदेश विशेष रूप से दिए हैं। एक उपदेश जनता के द्वारा नियुक्त होने के पश्चात् ही सिंहासन पर आसीन हो और दूसरे में कहा है कि तू अपनी प्रजा के लिए कल्याण के कार्य कर।

प्रजा ने अपने मताधिकार का प्रयोग करते हुए तुझे राजा चुन लिया, तुझे सिंहासनारुढ़ तो कर दिया, अपना राजा बनाने का कार्य तो कर दिया, राजा चुनने के लिए जो कर्तव्य वेद ने अथवा देश के संविधान ने जो कार्य तेरी जनता को दिया था, वह पूर्ण कर तुझे सिंहासन थमा दिया है, सम्हाल दिया है। अब तेरा कार्य जनता के प्रति तेरा कर्तव्य शेष रह गया है। उठ और अपने कर्तव्य को पूर्ण करने के कार्य में जुट जा। यदि अब तूने अपना कर्तव्य पूरा नहीं किया जनता के कल्याण के लिए कोई कार्य नहीं किया तो जिस जनता ने तुझे राजा के रूप में चुना है, वह जनता तेरे नीचे से इस सिंहासन को निकाल लेगी। तुझे राजा नहीं रहने देगी। तेरे से राजा के अधिकार लेकर किसी अन्य को दे देगी क्योंकि तेरी यह सत्ता प्रजा की इच्छा तक ही है, ज्योंहि प्रजा तेरे से विमुख हो गयी, तेरे से निराश हो गई, त्योंहि तू राजा नहीं रहेगा।

इन पंक्तियों में प्रजा के कल्याण के लिए कार्य करने का आदेश राजा को दिया गया है। यह कल्याण क्या होता है?कल्याण से भाव है जनता को सुखों से भर देना। जनता के हित के लिए कार्य करना। जनता की शिक्षा का प्रबंध करना। जनता के भरण, पोषण और निवास की व्यवस्था करना। जनता के लिए उत्तम व्यवसाय व व्यापार की व्यवस्था करना। विदेशी आक्रमणों से जनता को बचाना तथा देश के अन्दर होने वाले विद्रोह व जनविरोधी कार्यों से जनता की रक्षा करना। देश में किसी भी प्रकार का कोई अभाव न होने देना। मन्त्र कहता है कि हे राजन् ! तू जन कल्याण के अधिकाधिक कार्य कर जनता को प्रसन्न करने के कार्य में जुट जा। जब तू जनता को प्रसन्न करने में सफल हो जावेगा तो निश्चय ही जनता तेरी स्थिरता का कार्य करेगी और दीर्घकाल तक तू इस सिंहासन का सुख भोग सकेगा।

जनता के कल्याण के लिए तेरे लिए यह आवश्यक हो जाता है कि तू सब दिशाओं से कल्याण की और सुखों की वर्षा करवा अर्थात् अपने राज्य में इस प्रकार के कार्य कर कि सब दिशाओं से कल्याण ही कल्याण टपके, सब दिशाओं से प्रजा के लिए सुख ही सुख की वर्षा निरंतर होती रहे, कभी रूके नहीं। इस प्रकार सब और से प्रजा के लिए कल्याणकारी, सब दिशाओं से प्रजा के लिए सुखकारी व्यवस्था करके तेरे इस राज्य की तेरी इस सत्ता की जो आश्रय स्थली रूप प्रजा है, उस प्रजा के हृदयों में स्थायी निवास बनाते हुए विराजमान रहें ।

आर्य पुरोहित प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप सभा बिहार के मार्गदर्शन में एवं मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा एवं नालन्दा जिला आर्य सभा के संयुक्त तत्वावधान में आर्य समाज बिहारशरीफ में 8 दिवसीय पुरोहित प्रशिक्षण शिविर 20 सितम्बर 2015 को सम्पन्न हो गया। इस कार्यक्रम का उद्‌घाटन् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा बिहार के प्रधान श्री डॉ. यू. एस. प्रसाद जी ने किया। मुख्य अतिथि के रूप में श्री रमेन्द्र कु. गुप्ता मंत्री बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन पं. संजय सत्यार्थी वैदिक प्रवक्ता ने किया।

इस शिविर में पूरे बिहार प्रांत से आर्य जन भाग लिये थे। आचार्य विजय कु. नैष्ठिक उत्तर प्रदेश एवं पं. रामायण शर्मा, नरकटियागंज ने आठ दिनों तक महर्षिकृत संस्कार विधि के रहस्य को बारीकी से समझाया। सभी शिविरार्थी को निःशुल्क सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि, व्यवहार भानु आदि ग्रन्थ एवं प्रमाण पत्र दिया गया। आर्य समाज बिहारशरीफ के द्वारा आवास एवं भोजन आदि का बहुत अच्छा प्रबंध किया गया। यहाँ के समस्त पदाधिकारीगण धन्यवाद के पात्र हैं।

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा,

पटना के द्वारा प्रायोजित

आगामी कार्यक्रम

मगध प्रमण्डलीय आर्य महासम्मेलन

एवं चतुर्वेद शतकम महायज्ञ

तिथि –29, 30 नवम्बर, 1, 2 दिसम्बर 2015

स्थान–आर्य समाज, नेमदारगंज (नवादा), बिहार

आमंत्रित विद्वान :

सारस्वत मोहन मनीषी –नई दिल्ली

आचार्य हरिशंकर अग्निहोत्री –आगरा

बहन संगीता आर्या, भजनोपदेश –सहारनपुर

पं. भीष्म जी आर्य–भजनोपदेश –बिजनौर

आर्या उमाशंकर योगाचार्य –सूरत

सोनपुर मेला में वेद प्रचार आयोजन

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना के द्वारा प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी कार्तिक पूर्णिमा के अवसर पर 24 से 28 नवम्बर 2015 तक आर्य समाज सोनपुर के प्रांगण में वेद प्रचार का आयोजन किया जा रहा है।

समस्त आर्य बन्धुओं, उपदेशकों, भजनोपदेशकों, प्रचारकों, पुरोहितों से अनुरोध है कि इस कार्यक्रम में भाग लेकर वेद प्रचार को सफल बनावें।

मनोज शास्त्री, मंत्री
वैशाली जिला आर्य सभा

समाचार

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का निर्वाचन सम्पन्न

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा श्री मुनिश्वरानन्द भवन, नया टोला, पटना का निर्वाचन दिनांक 13 सितम्बर 2015 को आर्य समाज मंदिर, झाउगंज, पटना सिटी में सार्वदेशिक सभा के कार्यकारी प्रधान श्री आनन्द कुमार आर्य (कैप्टेन ग्रुप) के मार्गदर्शन में सम्पन्न हुआ। श्री मिठाई लाल जी आर्य की तरफ से श्री हनुमत प्र० आर्य पर्यवेक्षक के रूप में उपस्थित थे। साथ ही अग्निवेश ग्रुप की ओर से रामानन्द आर्य भी इस सभा में भागीदारी निभा रहे थे। इस प्रकार सार्वदेशिक सभा के तीनों ग्रुप द्वारा मिलकर कराये गए इस निर्वाचन में श्री भाई वीरेन्द्र विधायक, मनेर को प्रधान, श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता को मंत्री एवं श्री जयदेव कुमार आर्य को कोषाध्यक्ष सर्वसम्मति से चुना गया।

इस सभा में अद्‌भुत दृश्य देखने को मिला। मंत्री के लिए संजय सत्यार्थी एवं कोषाध्यक्ष के लिए श्री मुकेश राय का नाम सर्वसम्मति से प्रस्तावित हुआ, लेकिन इन दोनों ने रमेन्द्र कुमार गुप्ता को मंत्री और जयदेव आर्य का नाम कोषाध्यक्ष में प्रस्तावित करके बहुत बड़ी त्याग और उदारता का परिचय दिया। यह त्याग बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के इतिहास में मिशाल बन गया। बिहार के कोने-कोने से आये समस्त आर्यों ने सहसा कहने लगे कि ऐसा चुनाव हमने कभी नहीं देखा।

यह पहला अवसर था जब विरोधियों के दवाब के बावजूद बिहार के समस्त आर्य प्रतिनिधि इस निर्वाचन में श्रद्धापूर्वक भाग लेकर अपने संगठन शक्ति का परिचय दिया। आज बिहार में आर्य समाज के नाम पर किसी प्रकार की गुटबाजी नहीं है। समस्त बिहार के आर्य जन एकता के सूत्र में बंध चुके हैं। थोड़ा बहुत चाटुकारिता करनेवाले लोग अगर फर्जी आर्य प्रतिनिधियों की टीम बनाकर, डमी प्रधान, मंत्री आदि निर्वाचित करते हैं तो समझो वह ऋषि का हत्यारा ही है। ऐसे लोगों से आर्यजन भ्रमित न हों, सावधान रहें।

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नया टोला, पटना-4 से सभा के समस्त कार्यक्रम अग्रसारित हो रहे हैं। कार्यालय में अधिकारीगण उपस्थित होकर योजनाओं को मूर्त रूप दे रहे हैं। आर्यजनों से निवेदन है कि सभा के नाम पर किसी प्रकार का पत्राचार सभा कार्यालय के पते पर ही करें। आर्य संकल्प मासिक पत्रिका का प्रकाशन निरंतर जारी है। सभा के नये पदाधिकारियों की ओर से बिहार के समस्त आर्यों को सहयोग और समर्थन के लिए हार्दिक धन्यवाद।

भवदीय

रमेन्द्र कुमार गुप्ता, मंत्री

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा

महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस मनाया गया ।

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, नया टोला, पटना-4 के तत्वावधान में ऋषि निर्वाण दिवस के अवसर पर यज्ञ, भजन, प्रवचन आदि का आयोजन सभा प्रांगण में सायं चार बजे किया गया। इस अवसर पर वक्ताओं ने महर्षि दयानन्द के जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा कि दीपावली वर्षों से ऋषि की याद दिलाती चली आ रही है। क्योंकि इसी दिन वेदोद्वारक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपना नश्वर तन त्याग कर गुरुदत्त को नया जीवन प्रदान किया। महर्षि दयानन्द को नमन करते हुए आर्यों ने संकल्प भाव से आर्य समाज के विचारो एवं सिद्धांतों को जीवन में अपनाने पर विशेष बल दिया।

आज के परिवेश में ऋषि के जीवन की सार्थकता भी महसूस की गई साथ ही मुक्तकण्ठ से सभी वक्ताओं ने कहा कि अगर विश्व एकता के संसाधन आर्य समाज के पास है जिसे जीवन में अपना कर ऋषि मिशन को पूर्ण किया जा सकता है।

इस अवसर पर स्वामी नित्यानन्द सभा उप प्रधान श्री ज्ञानेश्वर शर्मा एवं श्री रामानन्द आर्य तथा श्री मुकेश राय भी उपस्थित थे। कार्यकारी मंत्री श्री संजय सत्यार्थी ने सभा का संचालन किया। ओम प्रकाश आर्य, हीरा यादव, प्रेम कुमार आर्य, संजय मिश्रा, सुदामा आर्य, सुनील कुमार, प्रमोद कुमार आदि ने भी अपनी उपस्थिति देकर ऋषि के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की।

इस अवसर पर सभा प्रधान श्री भाई वीरेन्द्र जी के विधान सभा चुनाव मनेर से जीतने पर सभा की ओर से उन्हें बधाई दी गई, प्रधान जी ने भी सभी आर्य जनों का आभार प्रकट किया और सभी को मिलकर आर्य समाज को आगे बढ़ाने का संकल्प लिया।

●

उप प्रधान श्री ज्ञानेश्वर शर्मा जी द्वारा सभा प्रधान भाई विरेन्द्र का सम्मान करते हुए एवं माईक पर सभा का संचालन करते हुए पं. अरविंद शास्त्री जी।

सभागार में उपस्थिति जिलों से आए सम्मानीय आर्य प्रतिनिधि गण।

प्रेषक :
सभा-मंत्री
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला
पटना-८०० ००४

मुद्रित सामग्री

सेवा में,
श्री/मेसर्स..
मो०..
पो०..
जिला..
(प्रेषिती के न मिलने पर यह अंक प्रेषक को ही लौटा दें।)

सभा प्रधान श्री भाई वीरेन्द्र का विधान सभा चुनाव जीतने पर बधाई देते हुए सभा के अधिकारी गण।

स्वत्वाधिकारी, बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 के लिए रमेन्द्र कुमार गुप्ता (मंत्री) द्वारा जय उमा प्रिन्टर्स, पटना द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।